2017 | अंक 23

अश्मिका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

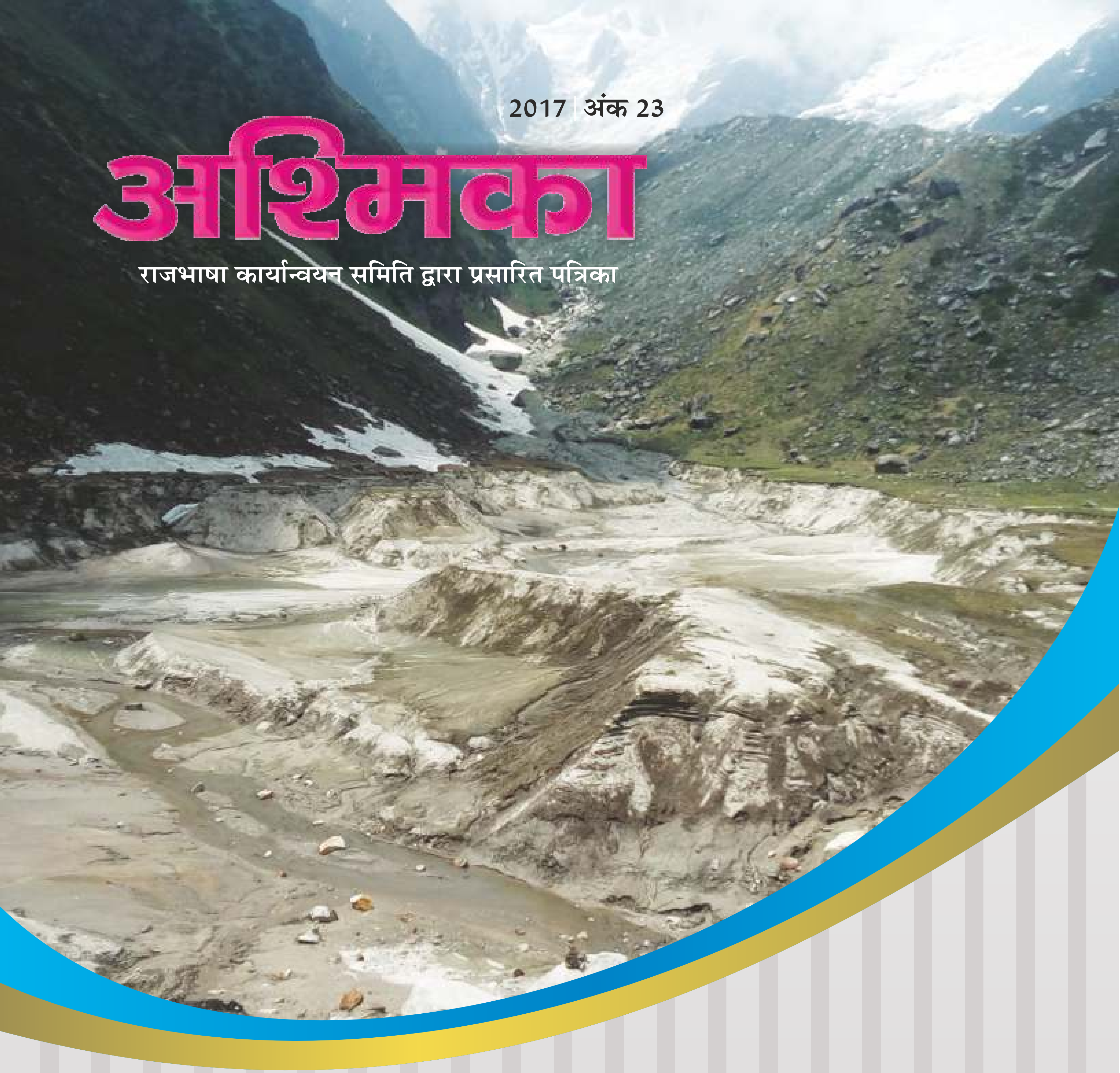

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान

देहरादून-248001

2017 | अंक 23

अशिमका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

संपादक
डॉ. गौतम रावत

संपादकीय प्रबंधक
रामबीर कौशिक

प्रकाशक
राजभाषा कार्यान्वयन समिति
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून–248001

मुद्रण स्थल
एलाइड प्रिन्टर्स
84, नहर वाली गली, देहरादून (फोनः 0135–2654505)

आवरण चित्र
चोराबारी झील का वर्तमान परिदृश्य

छायाकार
दीनदयाल खण्डेलवाल

पत्रिका में प्रस्तुत विचार लेखकों के स्वयं अपने हैं। संपादक मंडल/विभाग/प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

विषय सूची

निदेशक की लेखनी से		i
सम्पादकीय		ii
मंगल ग्रह में जीवन की सम्भावना	छवि पंत पांडेय	1
तीन वैज्ञानिक मुकरियाँ	मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी	3
क्या विदेशी मूल की वनस्पतियां एलर्जी का मुख्य कारण हैं?	डॉ. पी. एस. नेगी	4
पूर्वी घाट चलित पट्टी, उडीसा	कौमुदी जोशी	6
पिण्डारी हिमनद का क्षेत्रीय भ्रमण – एक अनुभव	डॉ. पंकज चौहान	10
जीवन गंगा	डॉ. मंजु द्विवेदी	14
निकोलस रोरिक	डॉ. सविता मोहन	16
विज्ञान की बातें	रमेश चन्द्र	18
अतिचालकता का संसार और नोबेल पुरस्कार	डॉ. विशाल चौहान	19
चन्द्र कम्प	डॉ. सुशील कुमार	21
गंगा तथा उसकी पृथ्वी पर समयावधि	डॉ. राकेश मोहन नौटियाल	22
बाँसुरी	संजीव डबराल	24
भू–विज्ञान पर हावी होते अन्य विज्ञान	डॉ. अजय कुमार वियानी	27
वैदिक काल मे भारतीय विज्ञान एंव संस्कृति सर्वोपरि थी	डॉ. पी.एस. नेगी	30
असम की पौराणिक गाथाऐं	डॉ. गीता बसुमतारी	34
विडूडभ	अभिषेक कुमार मिश्र	37
मेले	रघुवीर सिंह नेगी	39
रिश्ते (गीत)	कल्पना चन्देल	40
नहीं होते	संजीव डबराल	41
माँ के चरणों में शीश झुकाता हुँ	लोकेश्वर वशिष्ठ	42
काश मैं उड़ पाता	रघुवीर सिंह नेगी	43
आनन्द – संदेश	श्रीमती सविता वशिष्ठ	44
क्या जानवर भूकम्प के खतरे को महसूस कर लेते हैं?	डॉ. सुशील कुमार	46
मंगसीर की दीवाली	एन.के. जुयाल	48
संस्थान समाचार		49

निदेशक की लेखनी से

'अश्मिका' का तेईसवाँ संस्करण प्रस्तुत करते हुए अत्यन्त हर्ष की अनुभूति हो रही है। इसकी वजह अश्मिका की गुणवत्ता में उत्तरोतर अभिवर्धन तो है ही परन्तु मुख्य कारण इस वर्ष संस्थान का अपनी स्थापना के पचासवें वर्ष में प्रवेश है। संस्थान की इस यात्रा में संस्थान ने हिमालयन भूविज्ञान के कई आयामों को समझने का प्रयास किया है। इन प्रयासों तथा इनके परिणामों को जनसामान्य भाषा में सुलभ करने के लिये तथा हिन्दी के विस्तार हेतु अश्मिका पत्रिका की भी संस्थान की इस यात्रा में सराहनीय भागीदारी रही है। संस्थान की यह गृह पत्रिका राष्ट्रभाषा के माध्यम से वैज्ञानिक दृष्टिकोण व ज्ञान को जनसामान्य के स्तर तक ले जाने के लिए एक सेतुबन्ध की तरह कार्य कर रही है। विश्व के वर्तमान परिपेक्ष्य में इसकी नितान्त आवश्यकता भी है। समाज के व्यवहार में वैज्ञानिकता के समावेश के लिए विज्ञान की जटिलता एवम् आवश्यकता को जनसामान्य की भाषा में संवाद करना निश्चित ही लाभकारी होता है।

'अश्मिका' में आने वाले लेखों की संख्या व सामग्री से पाठकों के मध्य पत्रिका की लोकप्रियता एवम् पत्रिका की गुणवत्ता का आभास होता है। अश्मिका की गुणवत्ता में निरन्तर वृद्धि हो तथा अश्मिका अपने प्रयासों में सफल हो एवम् भविष्य में भी उन्नति के पथ पर अग्रसर रहे। यही मेरी शुभकामना है।

मीरा तिवारी

सम्पादकीय....

इस वर्ष संस्थान अपनी स्थापना के पचासवें वर्ष में प्रवेश कर चुका है। संस्थान की यात्रा का पचासवें वर्ष में प्रवेश, हर्ष एवम् उल्लास का अवसर तो प्रदान करता ही है अपितु गंतव्य तक पहुँचने के लिए संस्थान की अब तक की यात्रा का पुर्वावलोकन करने का समय भी देता है। इस यात्रा में संस्थान ने हिमालयी भू–विज्ञान की विभिन्न प्रक्रियाओं को समझने का सशक्त प्रयास किया है और संस्थान यह प्रयास अनवरत आगे भी करता रहेगा। संस्थान की इस यात्रा के एक पड़ाव से अश्मिका ने भी अपनी यात्रा प्राराम्भ की। इस यात्रा में अश्मिका का मुख्य उद्देश्य वैज्ञानिक क्षेत्र एवम् वैज्ञानिक उपलब्धियों का राजभाषा हिन्दी में प्रसार रहा है।

वैज्ञानिक लेखों जानकारियों, कहानियों, संस्मरण व कविताओं के द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण व ज्ञान को आम व्यक्ति के स्तर तक सरल शब्दो में उपलब्ध कराना ही अश्मिका का मंतव्य रहा है। विचार प्रणाली और कार्य–प्रणाली यदि एक ही भाषा में हों और वह भी मातृ भाषा में, तो व्यक्ति एवम् राष्ट्र के विकास की गति सीमित नहीं रह पाती है।

वर्तमान में नज़र डाले तो हम देखते है कि अधिकांश स्तरीय वैज्ञानिक सामग्री हिन्दी में उपलब्ध नहीं है। यदि कोई निज भाषा में ही अध्ययन करना चाहता है तो एक समयन्तराल बाद सामग्रियों की अनुपलब्धता बाधा उत्पन्न करती है। आज के वैश्विक वातावरण में अन्य भाषाओं के ज्ञान तथा आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता है परन्तु इस आवश्यकता की पूर्ति में अपने भाषाई सरोकारों से विमुख भी नहीं हुआ जा सकता है। बौद्धिक जनों को अपने क्षेत्र विषय में उपलब्ध अन्य भाषायी ज्ञान को अपनी भाषा में रूपान्तरित या नवीन सृजन पर अवश्य ही ध्यान देना चाहिए। इस तरह धीरे– धीरे ही सही हम न केवल स्तरीय सामग्री अपनी भाषा में उपलब्ध करा पायेंगे बल्कि भाषा को भी विकास की सीढ़ी चढ़ा सकेंगे। इस प्रकरण में यह अवश्य ध्यान रखना होगा कि शब्दों को क्लिष्ट बनाये बिना, ग्राहयता भी बनाये रखनी होगी। भाषा के अनवरत विकास हेतु यह एक आवश्यक मौलिक सोपान है।

गौतम रावत

मंगलग्रह में जीवन की सम्भावना

छवि पंत पांडेय
वा.हि.भू.सं., देहरादून

अनगिनत तारों से सुशोभित इस अनंत ब्रहमाण्ड में क्या इस छोटे से ग्रह पृथ्वी पर ही जीवन है? यह प्रश्न् रात्रि में झिलमिलाते आकाश को देख कर सदा मानव मन को आकर्षित करता रहा है। हमारे सौरमंडल में पृथ्वी के अतिरिक्त केवल हमारा पडोसी मंगल ग्रह ही जीवन की संभावना लिए है और इसी कारण से यह ग्रह वैज्ञानिक दृष्टि से सदा आकर्षण का केन्द्र रहा है। मंगल ग्रह जिसे हम लाल ग्रह के नाम से भी जानते है, हमारी पृथ्वी से आकार में आधा है परन्तु इसकी सतह का क्षेत्रफल पृथ्वी पर उपलब्ध भूमि के क्षेत्रफल के समान ही है। मंगल में एक दिन 24 घंटे 40 मिनट का व एक साल 686 दिन का होता है। इस ग्रह में दिन का तापमान लगभग पृथ्वी के समान है, परन्तु रात्रि का तापमान लगभग–240^{0}C तक नीचे गिर जाता है तथा मंगल ग्रह में गुरूत्वाकर्षण पृथ्वी का एक तिहाई है। इसके अतिरिक्त मंगल ग्रह का जन्म, उसका वातावरण, उसकी सतह पर दृष्टिगत होते ज्वालामुखी, मरूभूमि व अन्य भौगोलिक आकार, पानी की प्रचुरता के साक्ष्य, नदियों व तालाबों के अवशेष, हाइड्रेटेड खनिज तत्वों की मौजूदगी, ध्रुवीय हिमछंद आदि प्रमाण जीवन की संभावनाओं को इंगित करते हैं। सभी तथ्य व वैज्ञानिक प्रमाण मंगल पर जीवन की सम्भावना से इंकार नहीं करते। सम्भवतः इसी कारण से मंगल ग्रह सदा से न केवल कवियों, साहित्यकारों को आकर्षित करता रहा है वरन् वैज्ञानिकों के लिए भी अपने अस्तित्व में अनेक रहस्य समेटे हुए है। मंगल ग्रह में जीवन की खोज कई अर्थो में महत्वपूर्ण है। जीवन की उत्पत्ति व पृथ्वी के अतिरिक्त अन्य ग्रहों में जीवन की सम्भावना को जानने के लिए मंगल ग्रह का अध्ययन प्रथम सोपान की भांति है।

विगत कुछ वर्षों में मंगल ग्रह के वातावरण में मीथेन की खोज ने वैज्ञानिकों को विशेष रूप से आकर्षित किया है। न केवल मीथेन गैस की मंगल ग्रह में उपस्थिति वरन उसका सतह में वितरण तथा उसका व्यवहार, गैस के प्रवाह में अचानक उतार–चढ़ाव हमें विस्मित करते हैं। पृथ्वी पर 90% मीथेन गैस की उपस्थिति का कारण जैविक है, इसलिए मंगल ग्रह में इस गैस की उपस्थिति जीवन की संभावनाओं की ओर इशारा करती है। हालांकि पूर्ण साक्ष्य न होने के कारण वैज्ञानिक इस विषय पर एकमत नहीं हो सके हैं और मंगल में मीथेन गैस की उपलब्धता, रहस्य व आकर्षण का विषय बनी हुई है। इसी वजह से मंगल पर जीवन की सम्भावना को पूर्ण रूप से निरस्त नहीं किया जा सकता हैं। अमेरिकी पत्रिका 'साइंस' में प्रकाशित शोध पत्र के अनुसार संभवतः मंगल ग्रह में जीवाणु मीथेन का स्रोत हो सकते हैं परन्तु कुछ वैज्ञानिक इस गैस की मंगल में उपस्थिति को भौगोलिक भी मानते है।

विभिन्न वैज्ञानिक विधियों द्वारा (अंतरिक्ष में स्थित दूरबीन से एकत्र आंकड़े, जमीनी प्रेक्षण, स्पेक्ट्रल अध्ययन, सैद्धान्तिक व गणितीय विश्लेषण, पृथ्वी पर मीथेन के स्रोतों का अध्ययन आदि) उपलब्ध जानकारी से इस अनुमान पर पंहुचा जा सका है की मीथेन गैस कम ताप पर कार्बोन–डाई–आक्साइड के हाइड्रोजन से क्रिया के फलस्वरूप मंगल ग्रह से सतह के नीचे बनती है और रिसाव द्वारा वायुमंडल में पहुंच जाती है (CO_2+4H_2 = CH_4+2$H_2$0, T < 100^{0}C)। यह संभव हो सकता है क्योंकि इस अभिक्रिया के लिए उपयोगी सभी तत्व व परिस्थितियाँ उस ग्रह में उपलब्ध हैं। ज्वालामुखी में मीथेन के स्रोत होने की सम्भावना नहीं है। वैज्ञानिकों का यह भी मत है कि केवल ग्रह के वातावरण के अध्ययन से इस रहस्य को समझना मुश्किल है क्योंकि इसका उदगम सतह से काफी नीचे है अतः किसी अंतिम निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए गहराई से लिए गए नमूनों की जांच आवश्यक है। जीवन की सम्भावना (सतह पर या कुछ नीचे सुक्ष्म जैविकी का पनपना) से इंकार इसलिए नहीं किया जा सकता है क्योंकि धरती पर भी कई बैक्टेरिया व जीव है जो अतिविकट परिस्थितियों में भी लाखों वर्षों तक जिन्दा रह सकते हैं (उदाहरण डेनोकॉसरेडियोड्ररंस, हेलोबेक्टेरियाकेसी, हेलीफिलिक आर्कियां जीवाणु इत्यादि)। कई जीवाणु का जीवन ऑक्सीजन की जगह कार्बन–डाई–आक्साइड पर निर्भर करता है और इस जैविक प्रक्रिया में ये मीथेन का उत्सर्ग करते है। मंगल ग्रह की परिस्थितियों को प्रयोगशालाओं में कृत्रिम रूप से बनाकर अनेक सुक्ष्म जीवों पर किये गए अध्ययन द्वारा प्राप्त आंकडो से वैज्ञानिक मीथेन के जैविक

उदगम की सम्भावना का पूर्ण खंडन नहीं करते है। कारण चाहे जैविक हो या अजैविक, मंगल ग्रह के वातावरण में सतत् परिवर्तन ग्रह की सक्रियता को दर्शाता है।

मंगल ग्रह के विषय में अध्ययन के उद्देश्य से भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन की अतिविशिष्ट एवं गौरवशाली परियोजना के अंतर्गत मंगलयान 24 सितम्बर 2014 को निश्चित योजना के अनुसार 218 दिनों में लगभग 24 करोड़ किलोमीटर की यात्रा तय कर मंगल ग्रह की कक्षा में सफलतापूर्वक प्रविष्ट हुआ। इस उपलब्धि के साथ भारत अपने प्रथम प्रयास में ही मंगल ग्रह में पहुंचने वाला विश्व में प्रथम देश बन गया। इससे पूर्व मंगल ग्रह में पहुंचने वाले अन्य देश (अमेरिका, सोवियत रूस व यूरोपियन यूनियन) दो तिहाई से अधिक विफलताओं के बाद ही सफलता प्राप्त कर सके थे। भारत एशिया में प्रथम व समस्त विश्व में चार देशों की सूची में सम्मिलित हो गया है जिन्होंने मंगल ग्रह में अपनी विजय ध्वजा लहरायी है। भारत को गौरवान्वित करता विज्ञान और तकनीकी का उत्कृष्ट उदाहरण मंगलयान कई अर्थों में विशिष्ट मिशन है। तुलनात्मक रूप से अन्य मंगल परियोजनाओं से काफी कम खर्च में निर्मित मंगलयान को एक विशेष विधि द्वारा गणित व भौतिक विज्ञान के मूलभूत सिद्धांतों के आधार पर अपने लक्ष्य की ओर प्रक्षेपित किया गया, जिस कारण सीमित ऊर्जा का प्रयोग हुआ। इस तरह मंगलयान ने अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में विश्व के समक्ष कई नयी संभावनाओं के द्वार खोल दिए है।

मंगलयान में स्वदेश में निर्मित पांच विशेष उपकरण लगे हैं जो मंगल की सतह के वातावरण एवं जीवन के संकेत तलाशने में योगदान देंगे। इस यान पर लगा विशेष मीथेन संवेदक इस ग्रह के वातावरण में मीथेन की उपस्थिति के साक्ष्य एकत्रित करने के साथ इस तरह का पहला मंगल मिशन बन गया है। मंगलयान में लगे विभिन्न यंत्रो द्वारा प्रेक्षित आंकड़ो पर गहन शोध कार्य जारी है। मार्स ऑर्बिटल मिशन द्वारा भेजे गए कुछ आरंभिक चित्र प्रदर्शित किये गए है।

आशा की जाना चाहिए की मंगलयान द्वारा भेजी सूचनाओं के अध्ययन के परिणाम स्वरूप इस ग्रह के अनेक अनसुलझे रहस्यों का पटाक्षेप होगा तथा भारत अंतरिक्ष में और नए कीर्तिमान स्थापित करेगा। लेख में वर्णित सभी जानकारियां वैज्ञानिक पत्रिकाओं से साभार संकलित की गयी है।

(i) (ii) (iii) (iv) (v) (vi)

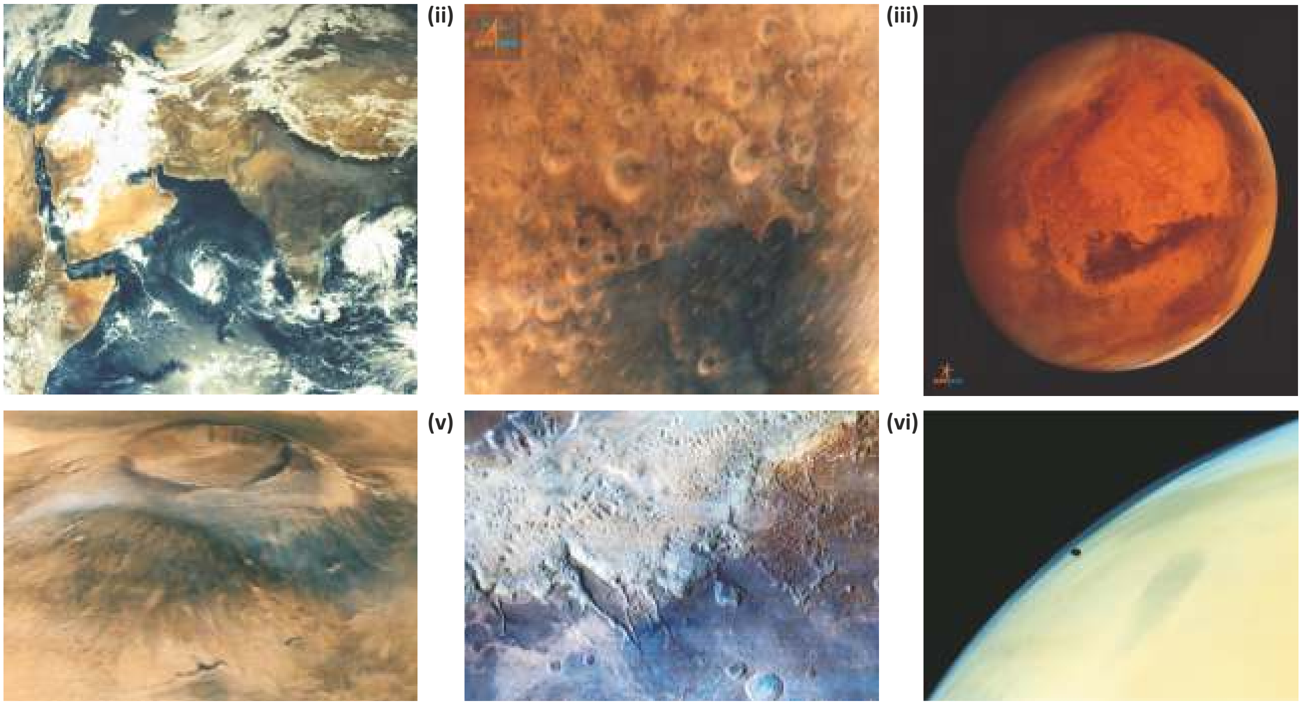

चित्र: (i) मंगल की तरफ जाते हुए पृथ्वी को भेजा गया पहला चित्र (ii) मार्स आर्बिटल द्वारा मंगल का पहला चित्र (iii) मंगल ग्रह का पूर्ण चित्र (iv) मंगल सतह पर विशाल ज्वालामुखी (v) विशाल घाटी (vi) फोबोस – मंगल ग्रह का प्राकृतिक उपग्रह (सभी चित्र – साभार – भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन भारत)

तीन वैज्ञानिक मुकरियाँ

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
44/3, कैनाल रोड, जाखन, देहरादून

साहित्य में 'मुकरी' या 'कह मुकरी' एक विशिष्ट चमत्कृति प्रधान कविता प्रकार, कवि रचते रहे हैं जो होती तो है एक छोटी सी कविता परन्तु उसमें शब्द और अर्थ इस प्रकार से गुँथे होते हैं कि लगता है कि बात एक की जा रही हैं पर निकलती किसी और के बारे में है। इस प्रकार इसे वक्रोक्ति का ही एक स्वरूप माना जा सकता है। संस्कृत साहित्य में इसका मूल खोजा जा सकता है परन्तु हिंदी साहित्य में इसे प्रसिद्ध मध्यकालीन कवि अमीर खुसरो (1259–1325) ने लोकप्रिय बनाया।

खुसरो की मुकरियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। उन्होंने तीन चार पंक्तियों की छोटी छोटी रचनायें लिखी जो दो सखियों के संवाद के रूप में हैं, जिनमें एक सखी कुछ वर्णन करती है तो ऐसा लगता है कि वह अपने पति या प्रियतम के बारे में बता रही है परन्तु अंतिम पंक्ति में जब दूसरी सखी पुछती है कि क्या तुम अपने पति या प्रियतम के बारे में बोल रही हो तो वह मुकर जाती है और कहती है कि मैं तो कोई और बात कह रही थी। पूरा वर्णन उस दूसरे उत्तर के लिये भी ठीक ही बैठता है। इस प्रकार कह कर मुकर जाना इसलिये 'मुकरी' या 'कह मुकरी'।

अमीर खुसरो की मुकरियों के दो उदाहरण प्रस्तुत हैं।

'बेर बेर सोवतहि जगावै
ना जागूँ तो काटे रवावै
व्याकुल हुई मैं हक्की बक्की
ऐ सखि साजन? ना सखि मक्खी।'

या

'आप हिलै औ मोहि हिलावै
वाका हिलना मोहे मन भावै
हिल हिल के वो हुआ निसंखा
ऐ सखि साजन? ना सखि पंखा।'

आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (1850–1885) ने भी समसामयिक मुकरियाँ लिखीं। बानगी के रूप में उनकी एक प्रसिद्ध मुकरी है–

'तीन बुलावैं तेरह आवैं
निज निज विपदा रोय सुनावैं
आँखे फूटीं भरा न पेट
क्यों सखि साजन? नाहिं ग्रेजुएट।'

आज भी कुछ कवि इस प्रकार के प्रयोग कर के इस काव्य प्रकार को बनाये हुए हैं। देहरादून में ही कवि वीरेन्द्र डंगवाल 'पार्थ' ने ऐसी अनेक सुन्दर मुकरियों की रचना की हैं। इसी क्रम में मैने भी तीन वैज्ञानिक मुकरियाँ लिखीं जो 'अश्मिका' के पाठकों के मनोविनोदार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

(1)

'निकले जब हम यात्रा पर थे मार्ग प्रदर्शक था वह ही
उसे पता था चले कहाँ से और कहाँ जाना वह भी
जैसे जैसे कहता जाता वैसे वैसे हम चलते
जहाँ जहाँ पर और जिधर को वैसे ही थे हम मुड़ते
और कभी यात्रा क्रम में यदि हो जाते हम इधर उधर
मार्ग भटकते होते विचलित पड़ जाते कुछ गलत राह पर
सत्पथ पर वह ले आता था नहीं क्रोध का कुछ लवलेश
पहुँचा देता सही लक्ष्य पर, क्या सखि सद्गुरू? नहिं जी.पी.एस.'

(2)

'जब भी हमको जग में कुछ भी होता प्रश्न, नहीं आता
कौन मिलेगा गुरू अब हमको, कौन बनेगा अब त्राता
हम जाते थे शरण उसी की वह था अमित ज्ञान भण्डार
सारे प्रश्नों के उत्तर दे उतार देता था सब भार
तरह तरह की नई नई सी इस जग की सारी बातें
बतला देता करवा देता दुर्लभ सभी मुलाकातें
मैं उसको पा धन्य हो गया मिली मुझे अद्‌भुत यह भेंट
सारा ज्ञान समेटा जिसमें, क्या सखि सद्गुरू? नहिं इंटरनेट'

(3)

'सदा सत्य की खोज करे वह एक लक्ष्य पर केन्द्रित
भूख प्यास बिसरा कर सारी रहे काम में रत नित
चाहे कितनी भी दिक्कत हो या कि अड़चनें मिलें अपार
काम पूर्ण करने का उसका, नहीं उतरता कभी बुखार
उसको ही हैं प्रश्न सूझते, उत्तर पाने वह व्याकुल
उसके प्राप्त उत्तरों से ही तो उन्नत होता मानव कुल
हम प्रणाम उसको करते हैं कायिक, वाचिक, प्रामाणिक
वही हमारा मार्ग प्रदर्शक, क्या सखि साधू? नहिं वैज्ञानिक

क्या विदेशी मूल की वनस्पतियां एलर्जी का मुख्य कारण हैं?

पी. एस. नेगी
वा.हि.भू.सं., देहरादून

एलर्जी क्या है? एलर्जी हमारे शरीर के प्रतिरोधक तंत्र द्वारा बाहरी तत्वों जैसे परागकण, धूलकण व अन्य प्रदुषण आदि के नुकसान से बचाने की अस्वाभाविक प्रतिक्रिया का नाम है। आमतौर पर एलर्जी का प्रभाव नाक, कान, आँख जीभ, फेफडों व त्वचा आदि पर देखने को मिलता है तथा एलर्जी के कारक को एलरजिन कहा जाता है।

वर्तमान समय में रहन–सहन, खान–पान व शहरी जीवन शैली के कारण शरीर की प्रतिरोधक क्षमता का भी ह्रास हो रहा है जिसके कारण सभी आयु वर्ग के लोग एलर्जी से पीडित है।

वैज्ञानिक शोधः उत्तराखंड के कुछ स्थानों एवं दून घाटी में एलर्जी के कारकों पर लेखक द्वारा विस्तृत अध्ययन किया गया। दून घाटी में स्थित एलर्जी परीक्षण करने वाली प्रयोगशालाओं से प्राप्त आंकड़ो के अनुसार 586 एलर्जी के रोगियों का अध्ययन किया गया। उक्त मरीजों में से 431 (73.54%) मरीज वनस्पतियों से उत्पन्न एलरजिन के कारण पीडित थे एवं केवल 155 (26.45%) मरीज गैर वनस्पति ऐलरजिन के कारण बीमारी ग्रस्त हुये थे। सबसे अचरज भरा निष्कर्ष यह है कि 431 वनस्पतियों की प्रजातियों में से 409 (94.89%) विदेशी मूल की थी जो कि विश्व के विभिन्न देशो में भारत में या तो जान बूझकर या अनजाने में लाई गई। सम्पूर्ण शोध कार्य के दौरान 36 विदेशी मूल की प्रजातियां एवं मात्र 7 देशी प्रजातियाँ, विभिन्न एलर्जी के रोगों में सम्मिलित पाई गई। उपरोक्त शोध में पाया गया कि 69% विदेशी प्रजातियों व 28% भारतीय मूल की प्रजातियों के

चित्र 1: दोडोनिया विसकोसा

चित्र 2: रिसिनिस कोम्मुनिस

चित्र 3: केशिया फिस्टुला

चित्र 4: यौकेल्प्टिश मिश्रित वन

चित्र 5: मेलिया अजदिरेचता

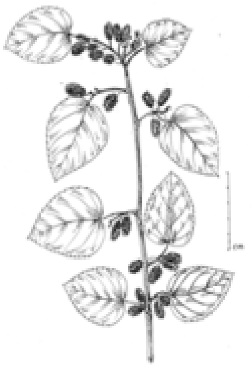

चित्र 6: मोरेस अल्बा

परागकण एलरजिन का कार्य करते हैं।

अधिकांश विदेशी मूल की वनस्पतियों से उत्पन्न ऐलरजिन प्रदुषण युक्त हवा में मिलकर वायु प्रदुषण को और गम्भीर बना देते हैं यहाँ तक कि उच्च हिमालय क्षेत्रों में भी विशेष कर पर्यटन मौसम में वायु प्रदुषण कई कारणों से वांछित स्तर से अधिक हो जाता है।

विदेशी मूल की वनस्पतियों का विभिन्न प्रकार की जलवायु में अनुकूलन क्षमता होने के कारण, ये प्रजातियाँ बड़ी तेजी से फल फूल कर अधिकांश स्थानीय प्रजातियों की जगह घेर लेती है फलस्वरूप एलर्जी के रोगियों की संख्या में दिनोदिन बढ़ोतरी हो रही है। विदेशी मूल की वनस्पतियों का आसानी से हमारे आस–पास उग जाना ही उनका मुख्य हथियार है एवं अधिकांश प्रजातियाँ, अब हमारे दैनिक जीवन में सब्जियों, फलों, फूलों सजावटी वृक्ष व अन्य उपयोगी वनस्पतियों के रूप में विद्यमान है। इसलिये इनके परागकण आसानी से हमारे शरीर के सम्पर्क में आकर बीमारी उत्पन्न कर देते हैं उपरोक्त शोध मे यह भी परिणाम निकला कि एलर्जी उत्पन्न करने वाली प्रजातियों में 66% शाकीय, 16% झाडी व 16% वृक्ष के रूप में विद्यमान हैं।

एलर्जी का वैश्विक स्वरूपः भारत वर्ष में ही नहीं बल्कि विश्व के विकसित व विकासशील देशों में एलर्जी एक अनियंत्रित एवम् भयावाह रोग के रूप में परिवर्तित हो चुकी है। विश्व एलर्जी संगठन की रिपोर्ट 2011–12 के अनुसार संपूर्ण विश्व में लगभग 30–40% आबादी किसी न किसी रूप में एलर्जी से पीडित है। भारतवर्ष में किये गये पूर्वकालिक शोधों के अनुसार पाया गया है कि 20–30% जनसंख्या एलरजिक राइनिटिस व 15% अस्थमा से पीडित हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर पूर्व में किये गये शोध परिणामों से ज्ञात हुआ कि भारत में 18% वनस्पति विदेशी मूल की हैं एवं इन प्रजातियों द्वारा पर्यावरणीय क्षति 91 अरब अमेरीकी डालर प्रतिवर्ष है। इसी प्रकार अमेरिका में वर्ष 2007 में एलरोजिक राइनिटिस व 2005 मे श्वास के रोगो के कारण व पर्यावरणीय क्षति का आंकलन लगभग 120 अरब अमेरिकी डालर प्रतिवर्ष किया गया है। जबकि विदेशी मूल की प्रजातियों द्वारा उत्पन्न आर्थिक बोझ आस्ट्रेलिया में 2007 में 9 अरब आस्ट्रेलियन डालर था।

सम्पूर्ण विश्व में अस्थमा से 3000 लाख लोग पीड़ित है जिसमें से लगभग 2,50,000 व्यक्ति प्रतिवर्ष मौत के मुँह में समा जाते है। यदि विदेशी मूल की प्रजातियों पर प्रभावी नियंत्रण नहीं किया गया तो विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक आकलन के अनुसार अस्थमा के रोगियों में अत्यधिक वृद्धि होगी।

सीानीय, क्षेत्रीय व वैश्विक स्तर पर किये गये शोध कार्यो से प्रमाण प्राप्त होते हैं कि सम्पूर्ण विश्व से ऐलर्जी रोगों विशेषकर श्वसन सम्बन्धी बीमारियों के लिये विदेशी मूल की वनस्पतियां ही जिम्मेदार हैं एवं ये ही बीमारियों का मुख्य कारण हैं। कुछ विदेशी प्रजातियों के चित्र सुलभ संदर्भ हेतु प्रस्तुत किये जा रहें हैं। ये प्रजातियाँ उत्तराखण्ड एवं दून घाटी में बहुतायात में मिलती हैं।

एलर्जी उपचारः एलर्जी से बचने के लिये निरोधात्मक व उपचार युक्त दोनों विधियों को प्रयोग में लाया जाता है। ऐलोपैथ चिकित्सा पद्धति में इसके लिये एन्टी एलर्जिक दवायें दी जाती है जो तात्कालिक रूप में कार्य तो करती है किन्तु रोग को जड़ से नहीं मिटाती बल्कि अन्य प्रकार के दुष्प्रभाव उत्पन्न करती है। एलर्जी का स्थायी उपचार आयुर्वेद में ही उपलब्ध है। इस विधि के अनुसार मानव शरीर में किन्ही कारणों से प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास होता है तभी एलर्जी की बीमारियां पनपती हैं। कुछ लोग बचपन से ही प्रतिरोधक क्षमता पाचक अग्नि व ओज शक्ति कम होने के कारण, इन बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

सामान्यतः परागकणो वाले मौसम एवं प्रदुषण मुक्त हवा से बचकर तथा एलर्जी होने वाले कारणो के जनजागरण से इन रोगों में काफी कमी लाई जा सकती है।

आयुर्वेद पद्धति के अनुसार घरेलु इलाज द्वारा भी एलर्जी से बचा जा सकता है। जिसमें अदरक, सौंफ व पुदीना उबालकर गुनगुना पीना, मौसमी फलों के सेवन, सुपाच्य भोजन, नियमित रूप से रोग व प्राणायाम, सोते समय एक चम्मच त्रिफलाचूर्ण व प्रतिदिन चयवनप्राशः के सेवन करने आदि प्रमुख हैं।

पूर्वी घाट चलित पट्टी, उडीसा

कौमुदी जोशी
भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, लखनऊ

हमारी पृथ्वी को बने 4.6 जीए अर्थात लगभग 460 करोड़ वर्ष हुए है। लगभग 452 करोड़ वर्ष चन्द्रमा का जन्म हुआ और लगभग 400 करोड़ वर्ष तक पूर्व हेडेन समय में पृथ्वी ठंडी हो रही थी। 400 से 250 करोड़ वर्ष पूर्व (4 जीए से 2.5 जीए) तक का समय, समय–स्केल में आर्कियन तथा 250 से 54 करोड़ वर्ष पूर्व तक का समय प्रोटीरोजोइक कहलाता है। भारतीय उपमहाद्वीप में, पेलियोजाइक समय में महानदी व गोदावरी सिस्टम लगभग 25 करोड़ वर्ष पूर्व में शुरू हुआ, जो समय, गोंडवाना की कोयले की सीमों एवं अवसाद का भी है।

ईस्टर्न घाट मोबाइल बेल्ट जोन (पूर्वी घाट चलित पट्टी) के गूगल मैप के चित्रों, आधारभूत फील्ड ट्रेवर्सों एवं प्रकाशित भूवैज्ञानिक मानचित्रों के अध्ययन से पता लगता कि क्षेत्र की बाहरी सीमा में तथा भीतर भी मुख्य डॅक्टाइल शियर क्षेत्रों के जाल बने हुए हैं, जिनकी पूछें प्रस्तर खंडों में फैली हुई हैं, तथा धीरे – धीरे लुप्त भी हो जाती हैं। इन शियर क्षेत्रों का चारित्रिक लक्षण माइलोनाइट तथा ढ़ले हुए प्रस्तरों से बने रेखांकित फोलिएशन है जिसमें धीरे–धीरे कणों का माप कम होता जाता है इसमें रेट्रोग्रेस्सिव कायन्तरण खिंचे हुए रेखाकार खनिज तत्व तथा सुस्पष्ट रूप से उद्भाषित एल्कलाइन एनोर्थोसिटिक एवं ग्रेनिटिक मेगमेटिस्म के चिन्ह् हैं। ये शियर क्षेत्र ईजीएमबी को प्रत्यक्ष रूप से मुख्यतः लगभग नौ भागों में बांटते हैं जो कि फिर अलग अलग तरीके से फोलियेटेड माइलोनाइट नाइस एवं अल्ट्रामाइलोनाइट से भरे हैं। ये नाइसिक फोलियेशन नॉन एक्सियल तरीके से वलयित है जिनकी एक्सिस मुख्य क्षेत्रीय समरेखन के लगभग सामानांतर है।

ईजीएमबी का यह पूर्ण क्षेत्र क्रस्ट टेक्टोनिक्स के एलकथानस मॉडल की तरह दिखता है जिसमें कणों का जुडाव एवं क्रमिक जुडाव होता है विभिन्न क्षेत्र अलग अलग क्रस्ट नेपे लगते हैं जो कि अपने बनने के स्थान से दूर आ गये हैं तथा कम नति ग्रस्त फॉल्ट की वजह से बना क्षेत्र दर्शाते हैं। एक दूसरे के नजदीक में फैले इन विशद खण्डों में ग्रेन्युलाइट, चारनोकाइट एवं खोंड़ालाइट उद्भाषित हैं। मध्य ईजीएमबी क्षेत्र पश्चिम में बस्तर क्रेटान के साथ क्रमिक ट्रांसिटिव संबंध दिखाते हैं। क्रेटान की परिधि में उपस्थित लगभग 500 किमी लम्बा सिलेरू शियर जोन इत्यादि कई सौ किलोमीटर लम्बे एवं गहरे हैं। इन क्षेत्रों में मैग्मेटिज्म, कायान्तरण, वलयन, भ्रंशन के समय एवं स्थान में क्रमिक पुनश्चरण हुआ है।

रोडिनिया (प्रथम भूमि, माता भूमि के लिए रूसी शब्द) के परिपेक्ष में सोचने पर प्रोटीरोजोइक समय की उडीसा की ईस्टर्न घाट मोबाइल बेल्ट (ईजीएमबी) अपने में एक महत्वपूर्ण सुराग प्रतीत होती है। वह इसलिए कि यह अपने बाम पडोसी बस्तर क्रेटान से कुछ स्थानों पर एवं उत्तर पड़ोसी सिंहभूमि क्रेटान से बिलकुल भिन्न गुण धर्म रखते हुए इन क्रेटानों से टेक्टानिक भ्रंश युक्त संबन्ध बनाये हुए है। सम्भवतः यह एक नियो प्रोटीरोजाइक सुपर कान्टिनेन्ट रोडिनिया था जो 1.3 से 0.9 जीए अर्थात 130 से 90 करोड़ वर्ष पूर्व बना था एवं 75–60 करोड़ वर्ष पूर्व टूट गया था। जिस प्रकार से आज इण्डियन प्लेट उत्तर की ओर बढ़ रही है फलस्वरूप उत्तर पूर्व भारत में नित नये भूकंप आ रहे हैं उसी प्रकार शायद कभी उडीसा प्लेट (इजीएमबी) भी भारत प्रायद्वीप की तुलना में उत्तर की ओर बढ़ रही थी अतः उसकी सीमांत भ्रंश रेखाएं कई अध्ययनों एवं खनिज धन की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो सकती है। एक दूसरे वाद के अनुसार यदि इजीएमबी पटटी एक टूटे हुए बडे से उल्कापिंड का हिस्सा है, जिसके गिरने से उत्तर में उपस्थित सिंहभूमि क्रेटान की चटटानों में उत्तर पूर्व से दक्षिण पश्चिम दिशा व उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व दिशा में दरारें आ गयी थीं, जो कि बाद में तप्त बेसिक डाइकों से भर गई। साथ ही इस स्थान पर उपस्थित चट्टानें चारनाकाइट एवं खोन्डालाइट में बदलते हुए उल्कापिंड के एक धक्के से तरल मेंटल तक नीचे हो गई थी, तो फिर भी यह पूरी प्लेट एवं इसके किनारे महत्वपूर्ण अध्ययन के केन्द्र हो सकते है। उड़ीसा क्षेत्र की

पूर्वी घाट चलित पट्टी ओडिशा

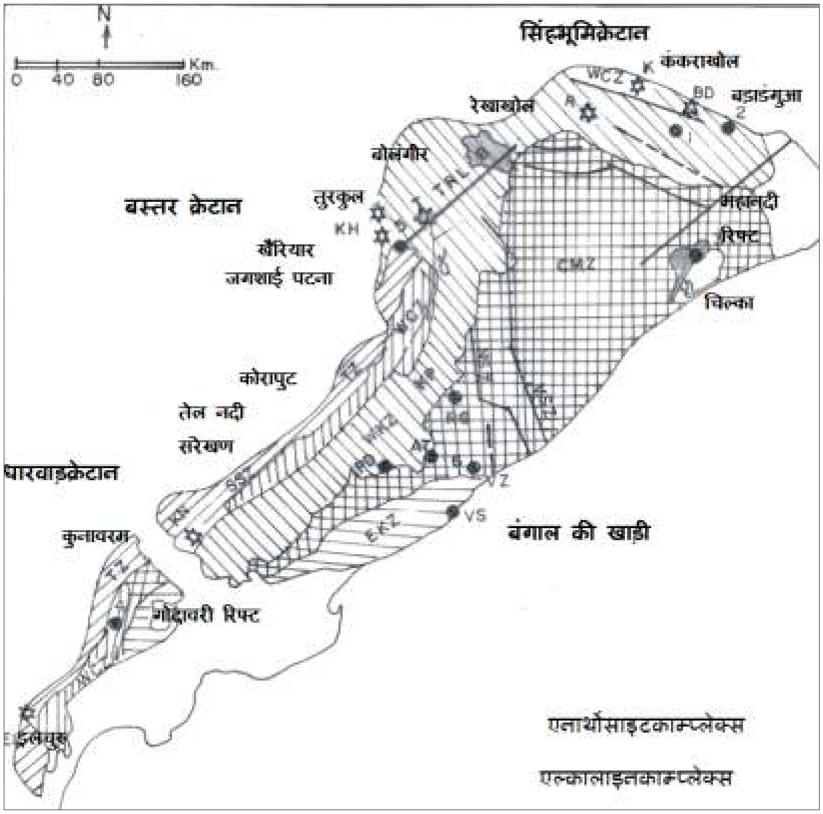

(नक्शा : नन्दा 2008)

मूल क्षेत्र (नन्दा 2008)
1– अंगुल क्षेत्र
2– चेड़ाइधरा–जेनापुर क्षेत्र
3– चिल्का क्षेत्र
4– कोंडापल्ली क्षेत्र
5– देवभोग–धरमगढ़ क्षेत्र
6– विशाखापत्तनम क्षेत्र

SSZ- सिलेरूशियर क्षेत्र
TRL- तेल नदी संरेखणशियर क्षेत्र
NSZ- नागवल्लीशियर क्षेत्र
VSZ- वेशधाराशियर क्षेत्र
EKZ- पूर्वी खोन्डालाइट क्षेत्र
CMZ- मध्यखोन्डालाइट क्षेत्र
WKZ- पश्चिमी खोन्डालाइट क्षेत्र
WCZ- पश्चिमी चारनोकाइट क्षेत्र

भीषण गर्मी हालांकि फील्ड अध्ययन में एक बडा व्यवधान उपस्थित करती है।

बहुत से वैज्ञानिकों (चेट्टी एवं मूर्ति 1994, 1998) का मत है कि सिलेरू शियर जोन एक 500 किमी लंबा इलचुरू–कुनावरम कोरापुट से जाने वाला प्रीकेम्ब्रियन समय का सूचर जोन है। कुछ वैज्ञानिक इसे जीवाश्मीकृत रिफ्ट घाटी मानते हैं जो कि एल्केलाइन मैग्मेटिज्म के समय एक प्रवाहिका की तरह प्रयोग होने के बदले पृथ्वी की प्लेटों के टकराकर जुड़ने पर दुबारा एक्टिवेट हो गयी (गुप्ता एवं बोस, 2004) तथा एक ज्वाला के रूप में ग्रेन्यूलिटिक शैल के प्रकार में फैल गई। हालांकि गुप्ता इत्यादि 2005, उपाध्याय 2006, नंदा इत्यादि, 2008 बताते हैं कि नये पर्वत संभवतः कोरापुट काम्प्लेक्स युक्त ग्रेन्यूलाइट के भिन्न भूखण्डों के दुबारा पर्वत बनते समय नवीन प्लूटोन एवं शिराओं के घुसने से बने हैं तथा यह आर्कियन बस्तर/धारवाड़ क्रेटान के एमलगमेशन से सम्बन्धित नही हैं।

नेफलीन सायनाइट तथा संबन्धित शैल प्रकार इजीएमबी में विभिन्न मात्रा में मुड़े तुड़े एवं टूटे हैं।

एल्केलाइन मैग्मेटिज्म विभिन्न आयु वर्ग में आते हैं जैसे मध्य प्रोटीरोजोइक के खैरियार एवं रैराखोल 150–140 करोड़ वर्ष पूर्व, कुनावरम एवं इलचुरू 130–120 करोड़ वर्ष तथा मध्य निओप्रोटीरोजोइक में कोरापुट के 85 करोड़ वर्ष के तथा सबसे नया मैग्मेटिज्म स्फुरण 51 करोड़ वर्ष पूर्व का पाया गया है। जिसकी एक छोटी नयी सी शैल श्रेणी बबेर के उत्तर में खैरियार एलकेलाइन काम्प्लेक्स से लगी पायी जाती है। 150 करोड़ वर्ष पूर्व क्षेत्र में बार बार होने वाले एल्केलाइन ज्वालामुखीय प्रक्षेप, प्रस्तरित नेफलीन सायनाइट के धीरे धीरे हुए क्रिस्टलीकरण के कारण बने तथा ये टाइटेनियम खनिजों के एक धारा प्रवाह यौगिक समूह, ऑक्सीजन की बढ़ती पलायनशीलता एवं पानी की क्रमिक बढ़त को दर्शाते हैं।

अब तक यह तो मान ही लिया गया है कि पूर्वी घाट क्षेत्र में पश्चिमी चारनोकाइट क्षेत्र एक पुरानी तथा स्पष्ट रूप से अलग विवर्तन एवं कायान्तरण इतिहास वाली चट्टानों का समूह है। प्रथम चरण के विर्वतन के फल स्वरूप आर्कियन में तीक्ष्ण नाइस एवं परतदार चटटानें बनीं थीं, पश्चिमी चारनोकाइट क्षेत्र समकक्ष तथा पूर्वीघाट के उत्तरी छोर पर स्थित चट्टानों के लिए यह एक आर्कियन समयावधि की प्रक्रिया ही रही होगी। अन्य अधिसंख्या चट्टानों में यही प्रक्रिया प्रोटीरोजोइक समयवधि में हुई। भट्टाचार्य (2004) ने पूर्वी घाट शैल समूह में अतिगर्म आर्कियन एवं प्रोटीरोजोइक ग्रेन्यूलाइट पहचाने हैं जो कि अलग–अलग उष्मीय स्तर के हैं पर विर्वतन का वही ढंग दर्शाते हैं।

पश्चिमी चारनोकाइट क्षेत्र में लगभग 170 करोड़ वर्ष पूर्व क्रोमीफेरस अल्ट्रामैफिक चट्टानें घुस गयी थीं। पश्चिमी चारनोकाइट के आगे पश्चिमी खोण्डालाइट क्षेत्र जो कि क्रेटान का किनारा दर्शाता है, में 145–120 करोड़ वर्ष पूर्व के समुद्र के खुलने के समय के ऐल्केलाइन मैग्मा की उत्पत्ति के चिन्ह् हैं, ऐसा कई वैज्ञानिकों का मत है। इसके बाद की भिडन्त में विर्वतन एवं समुद्र के बंद होने से चट्टानें डीएआरसी में बदल गई। यह पूरी पट्टी में ग्रेनविलियन विर्वतन की छाप छोड़ते हैं। दूर तक व्याप्त अत्यधिक ज्यादा तापमान का ग्रेन्यूलाइट फेसीज कायान्तरण, शैलों का आंशिक द्रवीभूत होना, एनोर्थोसाइट चार्नोकाइट तथा ग्रेनाइट शैल महापिन्डों द्वारा समुचित स्थानों पर वेधन तथा क्षेत्र में पश्चिमी चार्नोकाइट की आखिरी मुख्य प्रतिक्रिया–कृति अब आंशिक रूप से कायान्तरित मैफिक डाइक के रूप में दर्शित है। तथा सबसे नई प्रतिक्रिया के रूप में पुरानी डीएआरसीएस जगहों पर ऐल्केलाइन मैग्मेटिज्म व लैम्पराइट किम्बरलाइट अवस्थित है। टूटे एवं लचीले भ्रंश विवर्तनिक खंडित एवं पुर्नजीवित शियर तथा इनसे अथवा वैसे ही उत्पन्न श्यूडोटेकीलाइट फैलाव वाले स्थानों पर एल्यूमिनियम बेरीलियम समृद्ध क्यू एफ पैग्मेटाइट हैं जिनमें रत्न भी पाये जाते हैं (नंदा 2006 व 2008) जो संभवतः सबसे नवीन पैन अफ्रिकन पेलियोजोइक पूर्वार्ध में बने हैं।

बिस्वाल इत्यादि (2007) ने सुझाया था कि पूर्वी घाट चलित पट्टी पश्चिम में भंडारा (बस्तर) क्रेटान से वास्तव में नियोप्रोटीरोजोइक के अंत में मिली। उपाध्याय इत्यादि (2006) सुझाव देते हैं कि टक्कर से उत्पन्न यह सूचर क्षेत्र, कोलम्बिया सुपर कान्टिनेन्ट के टूटते वक्त जबकि पूर्वी भारत एवं अन्टार्कटिका के मध्य एक समुद्र एवं अवसादी चट्टानें उत्पन्न हो रही थीं मीसोप्रोटीरोजोइक रिफ्ट के ऊपर बाद में बना है। लगभग 140 एवं 120 करोड़ वर्ष पूर्व। उनके अनुसार मीसोप्रोटीरोजोइक रिफ्टिंग एवं ग्रेनविलियन बेसिन क्लोजर कोलम्बिया के टूटते एवं रोडनिया के बनते वक्त की एक विल्सन साइकिल को दर्शाता है। यह क्रेटान एवं पूर्वी घाट के बीच का सूचर बाद को पैन अफ्रिकन टेक्टोनिज्म के वक्त, 50 से 60 करोड़ वर्ष पूर्व कई एम्फिबोलाइट फेसीज की चटटानों से बिंधा हुआ है। वर्तमान क्रस्ट ज्यामिति केवल उधड़े हुए पैन अफ्रिकन थ्रस्ट को उजागर करती है न कि मूल ग्रेनविलियन सूचर को जो कि ग्रेन्यूलाइट थ्रस्ट शीट के नीचे हो सकता है। तेल नदी शियर इस ग्रेनविलियन सूचर के कारण हो सकता है जिसके आस पास एनोर्थोसाइट ल्यूकोनोराइट प्रकार की चट्टाने बिंधी हुई हैं। सिम्मत एवं रैथ (2008) ने अनुमान लगाया है कि पूर्वी घाट व तट क्षेत्र नियो प्रोटेरोजाइक से फेनिरोजाइक पूर्वाद्ध में बना होगा तथा इससे पश्चिम व उत्तर पश्चिम के दो क्रेटानों ग्रेनेविलियिन पूर्वी घाट रेनर काम्प्लेक्स, रोडिनिया भूमिखंड के बीच की मिश्रित चट्टानों की उत्पत्ति विल्सन साइकिल के अनुसार (उपाध्याय इत्यादि 2006) हुई होगी।

कोंडापल्ली क्षेत्र दक्षिणी ईजीएमबी के पश्चिमी छोर पर स्थित क्षेत्र है जहां इंदरबाइट चारनोकाइट मैफिक ग्रेन्युलाइट, थोड़े खोंड़ालाइट, डयूनाइट

आर्थोपायरोक्जिनाइट तथा क्रोमाइट चटटानों की उपस्थिति है। सेनगुप्ता इत्यादि (1991) ने इस इलाके के भूविज्ञान को कुछ इस तरह समझा कि सबसे पहले मैफिक अलट्रामैफिक कहीं कहीं पर हल्के एवं गाढ़े रंग की चटटानें बन गई तथा अल्ट्राबेसिक चट्टानों ने यहां उपलब्ध चट्टानों को भेदा। इससे चट्टानों के थोड़ा–थोड़ा पिघलने से गहराई में एस1 फैब्रिक बन गया अर्थात गाढ़े व हल्के रंग की एक रेखांकन दर्शाती हुई पट्टीदार चट्टानें बन गयीं। ये चट्टानें एक्सियल प्लेन में चार्नो इनडरबाइट घुसने से एफ 1 पूर्ण नति की तहें दिखाती हुई एस 2 प्लेन में फोल्ड हो गई। एफ 3 फोल्ड में नोराइट की डाइक एवं एफ 4 में डोलेराइट डाइक घुसी, इसके बाद 160 करोड़ वर्ष पूर्व, ग्रेनाइट एवं एलेनाइट युक्त पिग्मेटाइट, दरारों से चट्टानों में बस गई थी। मोनाजाइट पिग्मेटाइट चट्टान जमने की आयु लगभग 167 करोड़ वर्ष पूर्व थी। जिससे उत्तर–दक्षिण शियर क्षेत्र बनाये जिसमें हार्नब्लैंड नामक खनिज में आर्गन –आर्गन के ठन्डे होने की उम्र आज से लगभग 110 करोड़ वर्ष ज्ञात होती है अर्थात ये चट्टानें ग्रेन्युलाइट फेसीज से पहले का कायांतरण दर्शाती है जिसमें कहीं कहीं ग्रेनविलियन थर्मल के निशान भी दिखते है खास तौर पर पूर्वी घाट चलित पट्टी में गोदावरी नदी वैली रिफ्ट के दक्षिण में, हालांकि सामान्यतया ईजीएमबी में ग्रेनविलियन ग्रेन्युलाइट फेसीज कायांतरण ही दर्शित है। उन्होंने पता लगाया कि अत्यधिक गर्म तापमान (यूएचटी) पर खोंडालाइट में जो कायांतरण हुआ वह संभवतया गहराई में क्षारीय लावा के (8 किलो बार से ज्यादा दाब एवं 1000 डिग्री सेन्टीग्रेट से अधिक) ताप पर संघनित होने से तथा लगभग एक दाब पर तापमान के 700 डिग्री सेंटीग्रेट तक परिवर्तित होने से हुआ है। इस चट्टान में बायोटाइट नगण्य है क्योंकि शैलों में गारनेट व सिलिमेनाइट तथा गोमिद एवं कोरंडम उपस्थित है। अर्थात यह स्थान लावा तरंगों के संघनित एवं द्विगुणित होने का स्थान प्रतीत होता है। (महालिक 1994; नास इत्यादि 1996; चेट्टी 2007; नंदा 2008; पन्त इत्यादि, 2008)।

पिण्डारी हिमनद का क्षेत्रीय भ्रमणः एक अनुभव

पंकज चौहान
वा.हि.भू.सं., देहरादून

पिण्डारी का बस नाम ही काफी था। पिण्डारी हिमनद के बारे में बस लोगों के अनुभव एवं इन्टरनेट से प्राप्त जानकारी ही अपने आपको उत्साह पूर्ण अनुभव के लिए प्रेरित करती थी। एक चुनौतीपूर्ण एवं साहसिक अनुभव के लिए भी मैंने अन्य ग्लेशियरों का अनुभव किया था लेकिन एक इच्छा थी कि पिण्डारी का अनुभव कैसा होगा?, वहां कैसे पहुचेंगे?, कैसे—क्या इत्यादि के बारे में बस एक खुद की प्रश्नावली ने मन में जगह बना ली थी, और हम लोगों ने स्वयं को मानसिक रूप से तैयार कर लिया था, लेकिन जो अनुभव हुआ वह अपने आप में डरावना चुनौतीपूर्ण एवं साहसिक अनुभव था।

पिण्डारी प्रस्थान की तिथि 6 जून 2016 को, संस्थान की टीम जिसमें डॉ. निलेन्दु, श्री मोहित सिंघल और मैं शामिल थे, प्रातः 6 बजे ही तैयार हो गये थे। वर्चवल इलैक्ट्रोनिक्स के इंन्जीनियरों की टीम भी सुबह 6 बजे वाडिया संस्थान में पहुँच चुकी थी। पिंण्डारी में जो ए.डब्ल्यू.एस. (स्वचलित मौसम स्टेशन) लगना था, उसका सारा सामान ट्रक में लोड कर रख दिया था। गाड़ी में सवार होकर जैसे ही संस्थान से बाहर निकले, मानसून की पहली बारिश ने दस्तक दे दी। जिसका हमको डर था कि यदि बारिश होती है तो पिंडारी पहुंचना और ए.डब्ल्यू.एस स्थापित करना बड़ा मुश्किल हो जायेगा। हम लोग देहरादून से वाया श्रीनगर गढ़वाल, देवप्रयाग, रुद्रप्रयाग तथा कर्णप्रयाग होते हुए जैसे ही हम नारायणबगड़ (एक कस्बा) से पीछे पहुंचे, बारिश इतनी तेज हो गयी कि हमको अपनी गाड़ी को रोकना पड़ा। हवा के झोंके इतने तेज थे कि, उसको याद करने से आज भी डर लगता है। हवा इतनी तेज चलने लगी थी कि खड़ी गाड़ी भी जोर जोर से हिलने लगी थी। सड़क के दायँ—बाएँ बड़े—बड़े पेड़ गाड़ी को बस छुने की कोशिश कर रहे थे। सिर्फ यह सोचकर हम लोग गाड़ी के अन्दर शान्त बैठे थे कि चलो हम गाड़ी के अन्दर सुरक्षित है। सब कुछ भगवान के भरोसे पर छोड़ दिया था। भगवान से बस यही प्रार्थना कर रहे थे कि हे ईश्वर बारिश को रोक दे। फिर कुछ समय के बाद बारिश थोड़ा कम होती जा रही थी, रात भी होने लगी थी, अतः हम हल्की—हल्की बारिश में ही आगे बढ़ने लगे और धीरे—धीरे नारायबगड़ पहुचें। वहाँ पहुँचकर थोड़ी सी राहत मिली, और हमने सोचा आज तो बच गये लेकिन कल क्या होगा ? हम सभी लोगो ने एक लोकल होटल में रात बिताई और अगली सुबह होते ही हम सभी लोग ताजगी के साथ तैयार हो कर आगे बढ़े। रास्ते में हुए भू—स्खलन के मलबो को धीरे—धीरे हटाते हुए हम लोग सरण पहुँच गए। रास्ता खराब होने के कारण ट्रक ड्राईवर एवं गाड़ी ड्राईवर ने आगे जाने से साफ मना कर दिया था। उनके मना करने का कारण भी था क्योंकि एक तो बारिश बहुत हो गई थी, दूसरा कच्ची और संकरी सड़क थी। लेकिन हमारे पास आगे बढ़ने के अलावा कोई दूसरा रास्ता था भी नहीं। इसका कारण जहाँ हम रुके थे वहाँ ठहरने के लिए एवं खाने के लिए कोई भी साधन नहीं था और मौसम भी खराब चल रहा था। ट्रक ड्राईवर ने पहले तो चलने से साफ मना कर दिया था कि इस सड़क पर ये ट्रक नहीं जाएगा। परन्तु फिर सोचा की एक बार गाड़ी ड्राईवर से भी बात कर लेते है, कि वो क्या बोलता है? आश्चर्य से वो चलने के लिए तैयार हो गया। लेकिन इस शर्त पर कि जहां भी गाड़ी खड़ी हो गई, उसकी जिम्मेदारी आपकी होगी। हम इस शर्त पर आगे चल दिए थे। सड़क का बड़ा बुरा हाल था रास्ता बिलकुल कच्चा था जो की खतरनाक भी था जगह—जगह पर रास्ते में बड़े बड़े पत्थर, कीचड़ एवं जगह जगह से रास्ता टुटा पड़ा था(चित्र 2)। हम लोग मुश्किल से 10 कदम चलते और गाड़ी कीचड़ में जाम हो जाती, फिर हम सब लोग उसको धक्का लगाते और आगे बढ़ते। इसी तरह चलते गए और हम लोगों की हालत अब पहले दिन से ज्यादा खराब हो गई थी। लगभग 10 कि.मी. आगे चलने पर कार ड्राईवर ने भी मना कर दिया कि अब मैं कोई रिस्क नहीं ले सकता क्योंकि आगे का रास्ता बिल्कुल खराब था। हम लोग फिर ऐसी जगह फंस गये जहाँ ठहरने का कोई प्रबन्ध नहीं था। किसी तरह वहाँ के लोकल लोगों से मदद मांगकर बड़े मुश्किल से रात बिताई। यद्यपि रात भर नींद नहीं आई क्योकि ए.डब्ल्यू.एस का सामान अभी भी 10 कि.मी.0 पीछे सरण में ट्रक में था।

अगली सुबह उन सड़कों पर चलने वाली मैक्स गाड़ियों के लिए लोगों से मदद मांगी एवं सारे ट्रक का सामान उसमें

चित्र 1: पिण्डारी हिमनद का एक दृश्य

स्थानान्तरित कर दिया। फिर उस कीचड़/दलदल और बहुत संकरी सड़कों को देख कर तो हम लोगो को लगने लगा था कि शायद हम अपने घर भी वापस नहीं जा पायेगें। हम सभी लोग और सामान मैक्स गाड़ी से खारकिया स्टेशन के लिए चल दिए लेकिन सड़कों का हाल पहले दिन से भी बुरा था। क्योंकि सड़कों की नई–नई कटिंग हो रखी थी जो की चौड़ी नहीं थी, बस हल्की सी चुक कुछ भी कर सकती थी (चित्र 2)। हम लोग ईश्वर का नाम लेकर आगे की ओर प्रस्थान कर रहे थे और जैसे तैसे हम दोपहर तक खारकिया पहुँचे। वहाँ से हमको 40–45 कि0मी0 पैदल जीरो पॉईट पिण्डारी ग्लेशियर तक पहुँचना था।

खारकिया में थोडा बहुत लोकल लोगों के होटल से मैगी आदि खाई और ट्रेकिंग शुरू कर दी। वहाँ से हम लोगों ने AWS टावर का सामान खच्चर एवं पोर्टर के द्वारा पहुंचाना आरम्भ कर दिया था। हमारा अगला स्टेशन खाती गांव था, लेकिन समय और दिन ज्यादा न लगे हम लोग खाती में न रुककर उससे अगले स्टेशन द्वाली के लिए आगे बढ़े। हम खाती गांव से 3–4 कि.मी. आगे चले ही थे की बारिश फिर से शुरू हो गई और फिर हमने अपनी अपनी बरसाती निकाल कर पहन ली। हम बरसाती पहने हुए तो थे, लेकिन उसका कोई फायदा नहीं था क्योकि बारिश बहुत तेज और देर तक होती रही जिससे की हमारे सारे कपडे भीग चुके थे और हमारे बदन पर एक भी कपडा ऐसा नहीं था जो सुखा हो। रास्ते में जगह जगह खराब रास्ते को पार करते गये। बारिश इतनी तेज थी कि एक जगह मैं और श्री मोहित सिंघल एक लैण्ड स्लाईड जोन (चित्र 3–4)को पार कर रहे थे की अचानक एक पत्थर ऊपर से गिरता नजर आया और यदि में दो कदम पीछे नहीं हटता तो शायद वहाँ बड़ा हादसा हो सकता था। पर भगवान की कृपा से ऐसा कुछ नहीं हुआ। परन्तु अब और भी डर हमारे अन्दर बैठ चुका था। फिर भी बारिश मे भीगते भीगते आगे बढ़ने लगे लेकिन कुछ ही किलोमीटर आगे मलयाधोड़ में जब हम पहुचें तो देखा उस जगह सभी खच्चरों और पोर्टरों ने सामान जमीन पर उतार के रखा हुआ था। हमने जब उन लोगो से पूछा कि आगे क्यों नहीं चल रहे हो तो उन्होंने कहा कि नाले में पानी बहुत तेज है और यदि 1–2 घन्टे के अन्दर पानी कम नहीं हुआ तो आज रात यही बितानी पड़ सकती है या फिर वापिस खाती जाना पड़ेगा। वापिस जाना संभव नहीं था, क्योंकि बारिश और रात बहुत हो गई थी। अनिश्चितता थी ओर फिर वही हुआ कि मलयाधोड़ में नदी के किनारे पर कही भी जगह नहीं मिली कि हम लोग टेन्ट लगा सके और खाने की तो दूर दूर तक नहीं सोच सकते थे। थोड़ी दूर पर हमने देखा कि एक तबेला है जिसमें गड़रियों के भेड़ बकरियां थी। हमने उन लोगों से सहायता मांगी। हमको वो तबेला किराए पर लेकर उसमें रुकना पड़ा। लेकिन वह जगह रुकने लायक नहीं थी (चित्र 5) और उसमें सोना तो दूर की बात थी। परन्तु हम तो इसलिए भी खुश हो गये थे कि, बैठने की तो जगह मिल गई। वहाँ इतना गन्दा था कि हम अपनी मैट भी नही बिछा पा रहे थे। हमने खिचड़ी

चित्र 1 एवं 2: सड़क तथा रास्तों के स्थिति

चित्र 3 से 5: चित्र 3 एवं 4 में खराब ट्रेक की हालत एवं चित्र में भूस्खलन छेत्र कि स्थिति, तथा चित्र 5 में मल्याधौड़, हमारा आशियाना

खाकर सारी रात आग जलाकर बिताई और ये इंतजार करने लगे कि कब सवेरा होगा और हम आगे चलकर अपना काम पूरा करें। हम लोग ये सोच ही रहे थे कि एक जहरीले कीड़े ने मोहित सिंघल के पैर पर काट दिया, उसके काटने से खून बहने लगा और रूकने का नाम ही नहीं ले रहा था हमने साथ में ले जाई गई दवाई को भी इस्तेमाल किया लेकिन खून बद नहीं हुआ, फिर हमने दादी–माँ के नुस्खे अपनाये और कुछ देर बाद उन नुस्खो से खून आना बन्द हो गया।

अगले ही दिन सुबह सभी लोग डरे हुए थे, और हम लोगों में आगे जाने की हिम्मत नहीं थी कि यदि बारिश तेज हो गयी तो सभी कच्चे रास्ते और पुल टूट जायेगें और वापसी में सभी लोगों का लौटना मुश्किल हो जाएगा और फिर रेस्क्यू भी करना पड सकता था। किसी को कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था की क्या किया जाए, फिर सभी लोगों ने हिम्मत जुटाई और आगे बढ़ने के लिए कहा और हम लोग आगे बढते चले गये और हमने सोचा कि जब इतना आगे बढ ही चुके है तो पीछे मुड कर देखने का तो कोई मतलब ही नहीं होता है। हम द्वाली के लिए निकल पडे और रात को हम द्वाली के TRC में रूक गए वहीं पर रात बिताई। अगले दिन सभी सामन सहित पिण्डारी ग्लेशियर, जीरो पॉईट के लिए निकल पड़े तथा धीरे–धीरे सभी नदी – नालों और लैण्ड स्लाईड जोन (चित्र 6–8)को पार करते गए। कुछ लोगों की तबियत खराब होने पर वो फुरकिया में ही रुक गए थे। अगले दिन सुबह वो भी जीरो पॉईट पहुंच गए।

फिर तीन दिन काम करने के बाद दिनांक 12–06–2016 को हमने स्वचलित मौसम स्टेशन टावर को पिण्डर बाबा (श्री धर्मानंद जी) की मदद से स्थापित करके (चित्र 9–10) शाम को वापिस द्वाली के लिए रवाना हुए और पिण्डारी बाबा, देवी श्री नंदा महागौरी और उस ईश्वर का धन्यवाद किया जिनके आर्शीवाद से हम लोग सुरक्षित पहुंचे और अपना काम सफलता पूर्वक करके लोटें। दिनांक 16–06–2016 को जब हम लोग बागेश्वर पहुँचे तो हम अपने आप को बहुत खुशकिस्मत समझ रहे थे कि सही सलामत पहुँच गये। अंततः दिनांक 18–06–2016 को हम लोग देहरादून मुख्यालय वापस पहुँचे गये।

इस तरह के अनुभव से मेरा यह मानना है कि कभी कभी ऐसे भी हालात हो जाते है कि हमको कैसी भी मुसीबतें झेलनी पड़ती है। जहाँ खतरा ज्यादा होता है, और जब बात सरकारी काम काज की होती है तो जिम्मेदारी और भी ज्यादा हो जाती है। फिर कुछ कर भी नहीं सकते और काम

चित्र 6 से 8 : चित्र 6 एवं 7 में ट्रेक के खस्ता हालत, एवं चित्र 8 में भारी बारिश से भरा नाला

चित्र 9 से 10 : चित्र 9 में ए.डब्लू.एस. स्थापित करते हुए, एवं 10 में अन्ततः स्थापित ए.डब्लू.एस.

छोड भी नहीं सकते क्योकि प्राधिकारी को जवाब भी देना होता है। ऐसे कार्यों में रिस्क तो होता ही है लेकिन यदि हिम्मत न हारें और भगवान पर भरोसा रखे तो सभी कार्य बेहतर होते हैं। हमने ये ही किया और हम लोग तभी इतनी परेशानियों के बावजूद भी स्वचलित मौसम टावर लगाने में कामयाब रहे।

अंत में धन्यवाद देता हूँ श्री दानु ठेकेदार, पिण्डारी बाबा एवं समस्त वाडिया संस्थान की टीम वर्चुअल इलेक्ट्रॉनिक्स के ईंजीनियर एवं सभी पोर्टर एवं खच्चरों की, जिनकी वजह से यह कार्य उन हालात में सफल हो सका।

इसलिए मेरा यह सन्देश उन सभी नौजवान वैज्ञानिकों/शोध छात्रों आदि को है, कि हो सकता है हमसे भी बुरा अनुभव हमारे वरिष्ठ वैज्ञानिकों/शोधकर्ताओं का रहा होगा लेकिन मेरा यह अनुभव अत्यन्त याद रखने योग्य, चुनौतीपूर्ण एवं साहसिक था। तथा कभी भी कोई संकट या इस तरह की परेशानी आये तो सभी टीम सदस्यों को एक दूसरे को हिम्मत देकर एवं ठण्डे दिमाग से काम लेना चाहिये, और तब जबकि आप अपने परिवार एवं मुख्यालय से इतने दूर हो कि आपका कई दिनों तक कोई सम्पर्क नहीं हो पा रहा हो, तभी कोई कार्य सम्भव हो पाता है।

जीवन गंगा

मंजु द्विवेदी
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरषिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती
स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुह्यगण्डशैलात्स्खलन्ती।
क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती
पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित्पावनी नः पुनातु।।

ब्रह्मद्रवी गंगा आधिभौतिक सत्यों की प्रतीक हैं। पतितपावनी गंगा तीनों लोकों में प्रवाहित होती हैं, इनका जल अमृत है। महाभारत में गंगा को वेद–वेदान्त विद्या के साथ ही ज्ञान, क्रिया एवं भक्ति का सार तत्व कहा गया है। मोक्षदायिनी पुण्यात्मा त्रिपथगा की महिमा का वर्णन रामायण, महाभारत, पुराणादि तथा विभिन्न शास्त्रों में किया गया है। महाभारत को हिन्दू संस्कृति का विश्वकोष कहा जाता है, जिसके 26वें अध्याय में गंगा की विशेष रूप से प्रशंसा की गयी है। देश, प्रदेश, जनपद, आश्रम, पर्वत वास्तव में धन्य हैं, जो गंगा के तटवर्ती हैं, गंगाजल के सेवन से जन्म–जन्मान्तर के पाप नष्ट हो जाते हैं और यदि संसार में गंगा न रहें तो जगत का अस्तित्व ही व्यर्थ है–

वर्णाश्रम यथा सर्वे धर्मज्ञानविवर्जिताः।
क्रतवश्च यथासोमास्तथा गंगा विना जगत।।
यथा हीनं नभोऽर्केण भूः शैलैः खं च वायुना।
तथा देशा दिषष्चैव गंगाहीना न संशयः।।

जिस प्रकार देवताओं के लिए अमृत, पितरों के लिए स्वधा है, उसी प्रकार मनुष्य के लिए गंगाजल है। सहस्ररश्मि सूर्य का सम्बन्ध गंगा से है, इसी में सृष्टि की उत्पत्ति और विकास का रहस्य है। हठ योग में पिंगला नाड़ी को सूर्य नाड़ी तथा गंगा कहा गया है। पिंगला नाड़ी में ही प्राण वायु का संचार होता है और प्राणतत्व ही गंगातत्व है इसी कारण वह कभी विकृत नहीं होता है, यह जीवनदायिनी शक्ति केवल गंगा जल में ही है। इसका परीक्षण कर विज्ञान–वेत्ताओं ने सिद्ध किया है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने भी उसके भौतिक और आध्यात्मिक महत्व का सही मूल्यांकन कर प्रामाणिक बताया। गंगा के प्रवाह के समान ही भारतीय संस्कृति का प्रवाह अजस्र, अबाध और शाश्वत है। गंगा मात्र नदी नहीं हैं। जो लोग इन्हें नदी मानते हैं उनके मुख पर करारी चोट है–

''राम मनुज कस रे सठ बंगा।
धन्वी कामु नदी पुनि गंगा''।।

भारत देश धन्य इसलिए है कि यहां गंगा जैसी पावन देवसरिता का निवास है। संसार में शक्ति की ही पूजा हुआ करती है; देह की नहीं। सम–सामयिक परिप्रेक्ष्य में आज जो अल्पज्ञानियों द्वारा आक्षेप, तर्क–कुतर्क किया जा रहा है, उसके बावजूद लाखों करोड़ों मनुष्य माँ गंगा देवी का नाम सुनते ही भक्ति भावना से आह्लादित अपने पाप एवं कष्ट निवारण हेतु गंगा स्नान व गंगा दर्शन को दौड़ पड़ते हैं। चैतन्यरूपा गंगा के स्पर्श मात्र से राजा सगर के साठ हजार पुत्र न तर जाते, इनके दर्शन–स्पर्श मात्र से अनन्त जीवों का कल्याण न हुआ होता, इतनी महिमा न गायी गई होती। अनेकानेक भारतवासी सामान्य पर्व पर अत्यन्त कष्ट सहन करके काशी, प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन आदि स्थानों में जाकर स्नान करके समस्त पाप नाश और मुक्तिपद प्राप्त करने की आशा रखते हैं। गंगा का सर्वोत्कृष्ट स्त्रोत है पीयूष–लहरी परन्तु सम्पूर्ण इतिहास, धर्म, सम्प्रदाय गंगा की गौरवगाथा से गुथा हुआ है। सारे देश में जन्म से मरण तक जीवन के तार में गंगा का स्वर बोलता है।

गंगा गंगेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति।।
पद्म पुराण

भगवती गंगा, शक्तिस्वरूपा, ब्रह्मकान्ता, शंकरप्रिया पृथ्वी तल पर बड़े वेग से उतरी और मानव के आध्यात्मिक और भौतिक जीवन को सफल कर अन्न, जल, फल, शाक–सब्जियों, वनौषधियों और प्राणवायु ऑक्सीजन से भर दिया। साथ ही हमारे एवं पूर्वजों के अशुभ कर्मों के पापों को धोकर निर्मल किया। आह ! ऐसी सहज–सरल माँ गंगा को हम लोग अपने स्वार्थ में अन्धे होकर भविष्य के जीवन का विचार न करके चमड़े के जूते बनाने वाली फैक्ट्रियों का

गन्दा पानी बहाकर, उन्हें अपवित्र करके मूल सहज पावन स्वरूप को नष्ट कर रहे हैं। तथा कथित महानगरीय सभ्यता के नाम पर गंगा के तट पर बसे कानपुर, प्रयाग, काशी, पटना, कलकत्ता आदि महानगरों के गटरों का पानी गंगा जी में बहा कर उनका मूल स्वरूप नष्ट कर दिया गया है। इस दुष्कृत्य के लिए हमें गंगा जी, प्रकृति, परमात्मा तथा भविष्य में आनेवाली मानव–पीढ़ी क्षमा नहीं करेगी; क्योंकि हमने गंगा को नष्ट करके मानव–जीवन के आधार को समाप्त कर दिया है।

अतः समय रहते हम सभी को तथा सरकार को चाहिए कि गंगा जी में फैक्ट्रियों एवं गटरों का प्रदूषित जल न जाने दें, जिससे वह पावन बनी रहें। गंगा जी ने हमको जीवन दिया परन्तु हमने गंगा जी को क्या दिया ? यह यक्ष प्रश्न हमारे सामने है। अन्तःकरण में सदा विचार करें। वर्तमान युग में भी गंगा जल की पवित्रता को अनेक वैज्ञानिक परिक्षणों द्वारा परिक्षित कर भौतिक विज्ञानवादियों ने मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। वैदिक ग्रंथो, पुराणों में पदे–पदे माँ गंगा सम्बंधित बहुविधि चिन्तनों, तीर्थों, व्रतों एवं तटवर्ती वनौषधियों का विस्तार से उल्लेख है। मुगलों, तुगलकों, खिलजियों, लोदियों तथा अन्य शासकों की दिनचर्या में गंगाजल का उपयोग होता था। आइने–अकबरी आदि ग्रंथों एवं ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि अकबर, शाहजहां, औरंगजेब अपने लिए गंगाजल का प्रबंध रखते थे। इसी परम्परा का अनुपालन आंग्ल शासकों ने भी किया और आज भी विद्वान और भारतीय परम्परा के पोषक अन्यान्य लोग गंगा तट पर जीवन यापन करना अपना परम सौभाग्य समझते हैं। कृतयुग में सभी स्थल पवित्र होते हैं– त्रेता में पुष्कर, द्वापर में कुरूक्षेत्र एवं कलियुग में गंगा की ही विशेष महिमा है, इन्हें देखने से मंगल कल्याण होता है और स्नान करने एवं ग्रहण करने से सात पीढ़ियों तक का 'कुल' पवित्र होता है–

सर्वं कृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरेऽपि कुरूक्षेत्रं गंगा कलियुगे स्मृता।।
पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति।
अवगाढा च पीता च पुनात्या सप्तमं कुलम्।।
(वनपर्व)

माँ सलिला गंगा के प्रति जो पूर्व की धरणा थी वह आज भी है यह अनवरत प्रक्रिया में बनी रहेगी परन्तु यह सत्य है कि गंगा का प्रवाह रूका है, गंगा में बांध बनाकर उनके अस्तित्व को खतरे में डाल दिया गया। गंगा की अवरूद्धता के अतिरिक्त इसमें बढ़ते प्रदूषण की मात्रा मानव–समुदाय के लिए भयावहता का संकेत है। जब कभी भी प्राकृतिक एवं मानवीय कारणों से गंगा का प्रवाह रूका है तो उसका परिणाम अनिष्टकारी हुआ है। भारत सरकार ने इसे गम्भीरता से लेते हुये कई योजनाएँ एवं परियोजनाएँ बनायीं और यथेष्ट खर्च भी किया परन्तु अभी भी गंगा की स्थिति अति विकट बनी हुयी है। गंगा एक्शन प्लान तभी सफल होगा जब समस्त जनमानस के मन में माँ गंगा के प्रति अगाध श्रद्धा, विश्वास की अलख जगे। इस संकल्प को ईश्वरीय सत्ता का कार्य मानकर हम सभी भारतीयों को निष्ठा, लगन और दक्षता से संकल्पित होकर अपना धर्म निर्वाह करना होगा क्योंकि सेवा के लिए सामग्री की नहीं; हृदय की उदारता चाहिए। यही हमारी संस्कृति की अक्षुण्ण विरासत है; जो अपने पूर्वजों से धरोहर के रूप में प्राप्त है।

निकोलस रोरिक

सविता मोहन
राजकीय महाविद्यालय, चन्द्रबदनी, टिहरी गढ़वाल

पं० जवाहर लाल नेहरू जी ने लिखा है "जब मैं निकोलस रोरिक के बारे में सोचता हूँ तो मैं उसकी सृजनात्मक प्रतिभा और विविध कार्य–कलापों को देखकर दंग रह जाता हूँ।'' वह एक महान कलाकार विद्वान लेखक पुरातत्ववादी और अन्वेषक था। उसने मानवीय कार्यकलापों को स्पर्श कर उसमें ज्योति जगाई थी। उसने हजारों रंग से अपने चित्रों मे हिमालय की आत्मा को मूर्तरूप प्रदान किया है, उसने हिमालय के तंग शैल शिखरों को अपने चित्रों में संवारा और सजाया है। जो युगों से हमारे संतरी रहे हैं। उसने ऐसा करके संस्कृति इतिहास चिंतन और अध्यात्म को एक नया आयाम प्रदान किया है। उसने भारत के शाश्वत मूल्यों को अपनी कृतियों द्वारा बल प्रदान किया है। हम निकोलस रोरिक के ऋणी हैं क्योंकि उसने अपने रंग चित्रों में भारत की आत्मा को मूर्त किया है। रोरिक ने सात हजार से अधिक रंग चित्रों की सृजना की थी। इन चित्रो में हिमालय की आलौकिक सौन्दर्य के चित्र सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं उसके चित्रों में हिमालय का स्वर्गिक – रूप साकार हुआ है। रोरिक ने संस्कृति और दर्शन पर भी शोध परक निबन्ध लिखे। जिनमें 'मोरया के फूल' (1926), 'अटलाई हिमालय' (1929), 'वरदान के रास्ते' (1929), 'प्रकाश का राज्य' (1929), 'एशिया का हार' (1929), 'सुंदर एकता' (1946) 'प्रकाश हार हिमालय' (1947) और 'हिमवत' (1947) प्रमुख है। रोरिक ने लगभग उनतीस ग्रन्थों की रचना की विश्व की। अनेक भाषाओं में रोरिक की रचनाओं का अनुवाद भी हुआ है। रोरिक की रचनाओं में हिमालय का सौन्दर्य चिन्तन प्रमुख विषय है। हिमालय की संस्कृति का रोरिक ने अपनी रचनाओं में अनेक प्रकार से व्याख्या की है। रोरिक का जन्म 9 अक्टूबर, 1874 में रूस के सेंट पिटर्सबर्ग में हुआ था। वह बाल्यवस्था से ही बुद्धिमान था। कला इतिहास दर्शन और पुरातत्व उसके प्रिय विषय थे। रोरिक का जन्म रूस में हुआ अवश्य परन्तु उसकी आत्मा हिन्दू थी। वह अपने जीवन काल में भारत अधिक रहा। उसने रूस, यूरोप मध्य एशिया मंगोलिया, तिब्बत, चीन, जापान और भारत का व्यापक भ्रमण किया था। इन यात्राओं ने रोरिक के दृष्टिकोण को विस्तार प्रदान किया था। जिसका प्रभाव उनकी कृतियों में स्पष्ट दिखाई देता है। रोरिक विश्वविख्यात कलाकार लियोनार्ड–डी– विंसी और माइकल एंजिलों की तरह महान कलाकार बनने का स्वप्न देखते थे और अथक परिश्रम करके रोरिक वास्तव में विख्यात कलाकार बन गये। चव्वन वर्ष की उम्र में सत्य की खोज करने के लिए रोरिक भारत आए और हिमालय को देखकर अभिभूत हो गये और उन्होंने निश्चय किया कि वे शेष जीवन हिमालय के अपरिमित सौन्दर्य को रंग बद्ध और शब्द बद्ध करना चाहते है और इस कार्य में उन्हें अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। रोरिक ने एक कलाकार के रूप में हिमालय के रूप में अपना तदात्मय स्थापित किया जो कि किसी साधक का कर्म है। रोरिक ने हिमालय से प्रभावित होकर लिखा है–

''जितना आध्यात्मिक संतोष और प्रकाश हिमालय के अमूल्य बर्फ में है उतना कहीं नही है। मैं बहुत प्रसन्न हूँ कि मुझे हिमालय के गौरव और सौन्दर्य को विश्व भर में बिखेरने का सुन्दर सुयोग मिला है। हिमालय भारत का एक पवित्र रत्न है।''

हिमालय से रोरिक का संबन्ध अभिन्न है। वे हिमालय की आत्मा चतुर्दिक विकीर्ण करने मे अपने को गौरवान्वित समझते है। उन्होने सत्य व्याख्यायित करते हुए एक जगह लिखा है "जब मनुष्य और पर्वत मिलते हैं तो बड़ी घटनाएँ घटित होती है लेकिन गलियों की टकराहट हमें कहीं नहीं ले जाती।" इन्होने अपने जीवन के दो अन्तिम दशक जो कुल्लु घाटी में बिताए, ये इस कथन के महत्व को प्रमाणित करते हैं। यह स्पष्ट है कि इनका हिमालय प्रवास हर दृष्टिकोण से सुन्दर रहा और वे अपने इस प्रवास को बहुत महत्वपूर्ण मानते है। हिमाच्छादित उच्च शैल शिखरों की गोद मे साधनारत् होते हुए वे लिखते है – "सचमुच में अगर कोई व्यक्ति इन शिखरों की ऊँचाइयों का पता लगा पाता तो वह निश्चय ही हिमालय के रहस्य को जान पाता जिसके कारण वह अनुपमेय है। यद्यपि रोरिक हिमालय के वास्तविक दर्शन के लिए दीर्घ जीवन की कामना करता है। फिर भी उसके चित्रों से यह सहज ही पता चल जाता है कि वह युगों की दूरियों को पार कर चुका था और वह हिमालय

के सौन्दर्य से परिचित हो चुका था। किन्तु यह बात साधारण लोगों की समझ में नहीं आती। उसने शाश्वत और अनन्त की खोज में हिमालय को एक महत्वपूर्ण प्रतीक के रूप में प्राप्त किया और उसने हिमालय में अपनी साधना की पूर्णता के लिए एक सांसारिक माध्यम पाया।

कुल्लु घाटी उसके लिए केवल स्वास्थ्यप्रद जगह नही थी। उसने उसे साधना – भूमि के रूप में ग्रहण किया था और हिमालय की इसी पुण्य भूमि में रहकर उसने अपनी इच्छा पूरी की। उसने अपना उद्गार प्रकट किया –''हे भारत तुम दिव्य हो, मैं तुम्हारी दिव्यता के सामने नतमस्तक हूँ। तुम्हारी दिव्यता से तुम्हारे प्राचीन शहर, मन्दिर, चरगाह देव वन और नदियाँ तथा हिमालय आपूरित है।'' उसने कुल्लु घाटी के नगर मे रहकर अनेकानेक अमर चित्रो का सृजन किया था जिनमें 'स्मृति', 'जीवन के बूँद', 'श्रम के मोती', 'मैत्रेय के चिह्न', 'पूर्व के केतु' और 'तिब्बत की छटा' प्रमुख है। उसने इस घाटी में रहकर अनेक चित्रों का निर्माण किया। उसने हिमालय की गोद में निवास करते हुए अनेक प्राकृतिक चित्रों को संवारा और सजाया जिससे उसकी वैज्ञानिक बुद्धि का परिचय मिलता है। उसने बड़ी कुशलता के साथ पश्चिमी हिमालय का चारित्रिक भाषिक, वानस्पतिक और जीवनपरक निरीक्षण किया। उसके इस अभियान में अन्य मित्रों के साथ उसका बेटा जार्ज रोरिक भी था। विश्व के प्रमुख संग्रहालयों में रोरिक के चित्र देखे जा सकते हैं। भारत में भी वाराणसी प्रयाग और त्रिवेन्द्रम के कला भवनों में रोरिक के अनेक चित्र रखे गए हैं। रोरिक ने कला और संस्कृति की सुरक्षा के लिए "रोरिक–पैक्ट" नाम का संगठन बनाया। 1935 में जब संयुक्त राज्य अमेरिका और लैटिन अमेरिका ने इस पैक्ट पर हस्ताक्षर किया तब राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने कहा था–

''संस्कृति की सुरक्षा में यह पैक्ट इस अर्द्धगोलार्थ के देशो में एक प्रगतिशील कदम है।'' रोरिक ने हमें एक कलाकार और सौन्दर्य के सामंजस्य पर बल दिया है। "कला सौन्दर्य की सृष्टि करती है। सौन्दर्य के द्वारा हम विजय प्राप्त करते है सौन्दर्य के माध्यम से हम जुडते हैं और सौन्दर्य के माध्यम से हम प्रभु के पास पहुँचते हैं। प्रत्येक कलाकार का यही दर्शन होता है और वह इसी के माध्यम से सौन्दर्य की प्राप्ति करता है।"

रूस के महान लेखक गोर्की ने रोरिक को महान अन्तर्ज्ञानी की संज्ञा दी थी। रोरिक ने अपने चित्रो का अंकन करते हुए ईसाई, बौद्ध, हिन्दू आदि सभी धर्मो को स्थान दिया है उसने अपने अध्यात्म विषयक विचारों को भी रंगो के माध्यम से साकार रूप प्रदान किया है। मास्को मे 'काजन' रेलवे स्टेशन के भित्ति चित्र उसकी चेतना के ही मूर्त रूप है। उसके चित्र मन और आत्मा के एकीकरण का प्रतिरूप है।

उनके रंगचित्र केवल मौलिकता के ही परिचायक नहीं हैं अपितु उसके सत्य प्रेम को भी उजागर करते हैं। सन् 1920 में रवीन्द्रनाथ टैगोर ने उसके विषय में लिखा था–"आपके चित्रो ने मुझे काफी प्रभावित किया, उन्होने मुझे अनन्त सत्य का पाठ पढ़ाया। मै उनके प्रभाव को शब्दों में वर्णन नही कर सकता क्योंकि शब्दों की भाषा सत्य के केवल एक ही पक्ष को प्रकट करती है।" प्रत्येक कला मानव को पूर्णता की ओर ले जाती है। इनके द्वार भी विशेष ढंग के होते है आपके चित्र स्पष्ट हैं पर वर्णन से परे हैं आपकी कला महान है। हिमाचल प्रदेश के कुल्लू घाटी में 'नागर' नाम का एक छोटा सा गांव है। वहाँ पर देवदार और पाइन वृक्षों की छाया मे रोरिक को समाधि है जिस पर लिखा हुआ है–13 दिसम्बर, 1947 को निकोलस रोरिक को यहाँ समाधिस्थ किया गया, जो भारत का एक महान रूसी मित्र था।

विज्ञान की बातें

रमेश चन्द्र
290/4 एम.डी.सी. पंचकुला, चण्डीगढ़

'ग्रेट एसेज इन साइन्स' नाम की पुस्तक के 29 निबंध विभिन्न विद्वानों द्वारा लगभग 1850 से 1950 के मध्य लिखे गये थे। इस पुस्तक में लिखे विचार कितने विविध हैं, इस का एक प्रमाण कुछ निबंधों के यह शीर्षक देते हैं: 'दी इन्फ्लुएंस ऑफ डार्विनइजम ऑन फिलोसोफी','साइन्स एंड कल्चर', 'साइन्स एंड लिट्रेचर', 'रिलिजन एंड साइन्स', 'साइन्स एंड अल्टीमेट ट्रूथ', 'ई = एम सी^{2}'. यहाँ इस पुस्तक से प्राप्त कुछ जानकारी प्रस्तुत है।

डार्विन

डार्विन को 'ओरिजिन ऑफ स्पीशीज' प्रकाशित होने से पूर्व यह उत्सुकता थी कि उन की थ्योरी के प्रति तत्कालीन तीन मुख्य वैज्ञानिकों, भूविज्ञान के लायल, वनस्पति विज्ञान के हुकर तथा जीव विज्ञान के टी.एच. हक्सले की क्या प्रतिक्रिया होगी।

एप्स पूर्वज

टी. एच. हक्सले (1825–1895) डार्विन की थ्योरी के प्रचारक थे। एक सभा में बिशप विलबर फोर्स तथा हक्सले मंच पर उपस्थित थे। बिशप ने अपने भाषण के अंत में हक्सले से पूछा कि 'आपके माता अथवा पिता पक्ष के पूर्वज एप्स थे?' हक्सले ने उत्तर दिया: 'हाँ, मैं एप्स को अपना पूर्वज मानता हूँ बनिस्बत ऐसे लोगों के जो शिक्षित हो कर भी वाद–विवाद में अपने प्रतिपक्षी का परिहास करते हैं'।

भौतिकी की प्रगति

प्रिन्सटन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर वाल्टर स्टूअर्ट भौतिकी में क्षण–क्षण हो रही प्रगति से परिचित थे। एक सेमिनार से निकलते छात्रों से स्टूअर्ट ने पूछा: 'क्या सीखा?' उत्तर मिला 'हम भौतिकी में जो कुछ गत सप्ताह तक जानते थे आज वह सब गलत सिद्ध है।'

बार्बेर्यन वैज्ञानिक

स्पेन के अग्रणी दार्शनिक ओजे ओर्टेगा इ गस्सेट (1883–1955) ऐसे व्यक्तियों का सम्मान करते थे जो एक एनसाइक्लोपीडिया के समान अनेक विषयों का ज्ञान रखते हों। एक ही विषय का ज्ञान रखने वाले 'स्पेशलिस्ट' व्यक्तियों को वह बार्बेर्यन अर्थात पिछड़ा हुआ समझते थे। ओर्टेगा लिखते हैं कि 19वीं सदी के आरम्भ में लगभग हर वैज्ञानिक अनेक विषयों में प्रवीण था परन्तु सदी के अंत तक प्राय सभी वैज्ञानिक 'स्पेशलिस्ट' थे। ओर्टेगा के अनुसार यह विज्ञान ही नहीं समस्त संसार का दुर्भाग्य है क्योंकि ज्ञानवृद्धि के लिये 'स्पेशलिस्ट्स' और 'अनेक विषयों का ज्ञान रखने वाले' दोनों ही प्रतिभाओं वाले व्यक्ति चाहियें।

एक पुराना अप्पेरेट्स

अमरीकी साहित्यकार जॉनडोस पोस्सोज ने जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी में दीर्घकाल तक कार्यरत गणितज्ञ, वैज्ञानिक तथा इंजिनियर चार्ल्स प्रोटियस स्टाइनमेट्ज की जीवनी लिखी थी। इस में उन्होंने स्टाइनमेट्ज की तुलना जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी के एक कीमती अप्पेरेट्स से की और अंत में लिखा था'... फिर एक दिन उस पुराने अप्पेरेट्स ने काम करना बन्द कर दिया। स्टाइनमेट्ज का निधन हो गया।'

ई=एम सी^{2}

अल्बर्ट आइन्स्टाइन (1879–1955) ने इस सूत्र की व्याख्या सरल भाषा में की है। सूत्र से वस्तुओं के अणु कणों में समाई ऊर्जा का अनुमान लगता है। सूत्र में 'ई' का अर्थ ऊर्जा की मात्रा, 'एम' अणु कणों का द्रव्यमान तथा 'सी' प्रकाश की गति है। क्योंकि यहाँ 'सी^{2}' का अर्थ 90,000,000,000,000,000 की विशाल संख्या है, सूत्र से स्पष्ट है कि कैसे कुछ ही रेडियो–एक्टिव अणु कणों के टूटने से अत्यंत बड़ी मात्रा में ऊर्जा मिल जाती है। प्रश्न उठता है कि मनुष्य को इस का बोध 20वीं सदी में ही क्यों हो सका। आइन्स्टाइन लिखते है कि यदि कोई धनवान अपने धन का व्यय न करे तो अन्य व्यक्ति उसकी सम्पत्ति का अनुमान नहीं लगा सकते। अधिकांश अणु कण ऐसे ही धनवान की तरह अपनी ऊर्जा संजो कर रखते हैं। वर्ष 1995 तक, जब 'रेडियो–एक्टिविटी' की पहचान हुई, कोई नहीं जानता था कि अणु कण टूट भी सकते हैं तथा उन में समाई ऊर्जा का कुछ भाग उपलब्ध हो सकता है। 20वीं सदी में ऐसी परिस्तिथियाँ बनी जिन से अणुशक्ति का कन्ट्रोल मनुष्य ने सीखा है तथा उस का प्रयोग विनाश तथा प्रगति दोनों के लिए किया है।

नोट: मार्टिन गार्डनर द्वारा सम्पादित 'ग्रेट एसेज इन साइन्स' वर्ष 1957 में पॉकेट बुक्स इंक द्वारा न्यू यॉर्क में प्रकाशित हुई थी।

अतिचालकता का संसार और नोबेल पुरस्कार

विशाल चौहान
वा.हि.भू.सं., देहरादून

क्या कभी आइसक्रीम खाते खाते या रेफ्रिजरेटर से बर्फ निकालते हुए आपने कभी सोचा है कि यदि किसी धातु को अत्यधिक ठंडा करते चले जायें तो क्या होगा? दरअसल यह भौतिक विज्ञान का एक बहुत ही रोचक विषय है। कुछ धातुऐं ऐसी होती हैं जो कि परम शून्य तापमान यानि कि –273 डिग्री सेल्सियस के नजदीक पहुँचते ही अतिचालकता का गुण दर्शाती हैं। इस पर भी यदि उन्हें बिल्कुल चपटा अथवा पतला या द्वि–विन्यासी कर दिया जाये तो उनमें और जटिलताऐं आ जाती हैं। इसी विषय से जुडे कुछ अनसुलझे रहस्यों से पर्दा हटाया है वर्ष 2016 के भौतिकी के नोबेल पुरस्कार विजेताओं ने। रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ सांइसेस द्वारा प्रदत्त यह अतिप्रतिष्ठित पुरस्कार ब्रिटिश मूल के व अमेरिका में कार्यरत तीन भौतिक विज्ञानियों को संयुक्त रूप से दिया गया है। इस पुरस्कार का आधा भाग दिया गया है डेविड जे. थोलुज को व शेष आधे भाग को एफ. डेंकन हेल्डेन व जे. मिशेल कोस्टरलिट्ज के मध्य समान रूप से वितरित किया गया है। संक्षेप में कहें तो यह पुरस्कार द्वि–विन्यासी पदार्थों में विशेष परिस्थितियों में घटित होनें वाली टॉपोलॉजिकल अवस्था परिवर्तनों की सैद्धंतिक व्याख्या के लिए दिया गया है।

सामान्यतः पदार्थ की सभी अवस्थाऐं जैसे कि ठोस, द्रव व गैस मूलतः क्वांटम भौतिकी के सिद्धाँतों द्वारा संचालित होती है किंतु सामान्य तापमान में अणुओं की निरंतर गतिशीलता के कारण क्वांटम प्रभाव दिख नही पाते हैं। लेकिन परम शून्य तापमान के नजदीक पहुँचते ही आण्विक गतिशीलता लगभग नगण्य हो जाती है, जिसके कारण किसी भी प्रकार का प्रतिरोध भी समाप्त हो जाता है। अतः फलस्वरूप अतिचालकों में विद्युत धारा निर्बाध होकर अनवरत रूप में बहने लगती है, जैसे कि किसी अतिचालक द्रव में कोई भँवर बिना गति को धीमा किये अनंतकाल तक घूमता रहे।

विभिन्न शोधकर्त्ता लम्बे समय तक यह मानते रहे कि पदार्थ की अत्यंत पतली परत या द्वि–विन्यासी अवस्था में अत्यधिक तापमान कम करने पर भी अवस्था परिवर्तन सहज नहीं है। इसके साथ ही 'क्वांटम हॉल इफैक्ट' नामक एक रहस्यपूर्ण सिद्धांत पहेली बना हुआ था। दरसल प्रयोगों द्वारा यह देखा गया था कि द्वि–विन्यासी अवस्था में पदार्थ की विद्युत चालकता किसी भी प्रकार के परिवर्तित चुम्बकीय क्षेत्र, तापमान व अशुद्धियों से सहज ही प्रभावित नहीं होती है। किंतु यदि चुम्बकीय क्षेत्र अथवा तापमान में अत्यधिक परिवर्तन किया जाये तो ऐसे पदार्थ की विद्युत चालकता क्रमिक रूप से पूर्णांक पदों में बढ़ना एक रहस्य बना हुआ था जिसे सन् 1982 में थोलुज ने सफलतापूर्वक सुलझाया। डेविड थोलुज ने इसे एक टॉपोलॉजिकल घटना बतलाया व टॉपोलॉजी के आधार पर इसकी व्याख्या की।

अब आप कहेंगे कि ये टॉपोलॉजी और टॉपोलॉजिकल अवस्था परिवर्तन क्या है? दरअसल टॉपोलॉजी गणित की एक शाखा है जिसके अंर्तगत किसी भी वस्तु या पदार्थ में क्रमवार होनें वाले परिवर्तनों का अध्ययन किया जाता है। टॉपोलॉजिकल अवस्था परिवर्तन को इस प्रकार समझा जा सकता है कि एक मिट्टी के गोले को बिना तोड़े उसे खींच

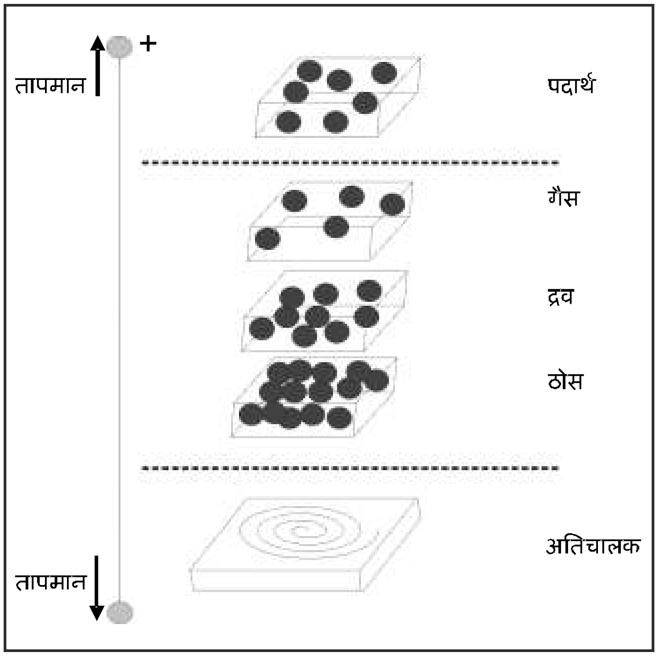

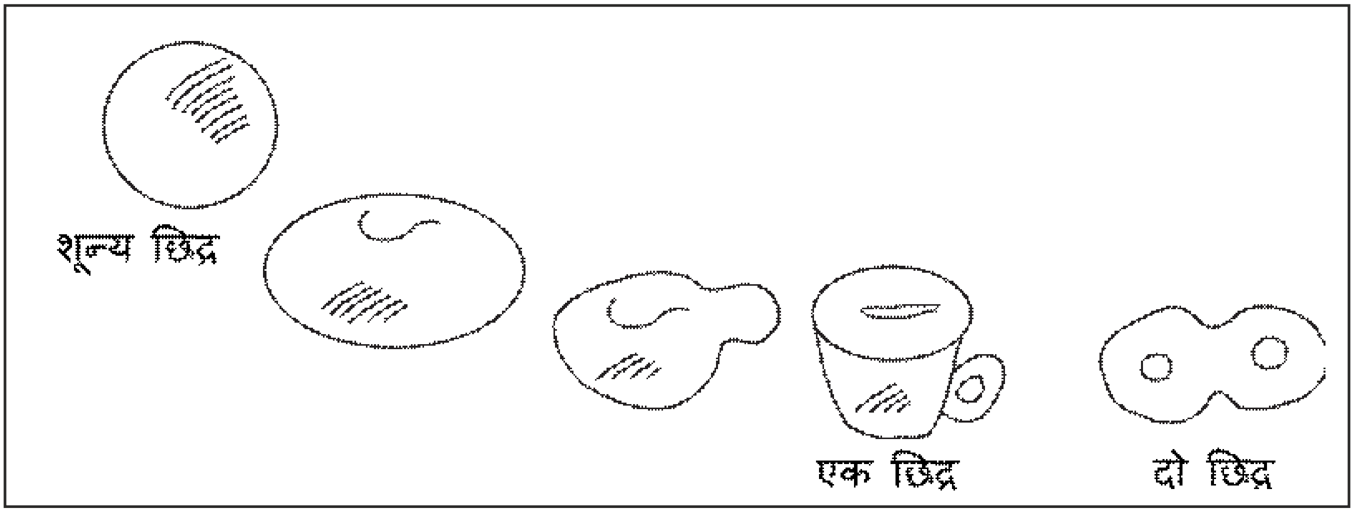

कर एक छोटे गिलास का आकार दिया जाए और फिर पुनः एक ओर से खींच कर एक छेद करके उसे एक कप का आकार दे दिया जाये। इस प्रक्रिया में एक–एक क्रम आगे बढ़ते हुए अवस्था परिवर्तन होता है। इसके विपरीत सामान्य प्रकार की अवस्था परिवर्तन जैसे बर्फ का पानी में बदलना आदि में क्रमिक रूप से आगे बढ़ने की काई बाध्यता नहीं होती है।

क्वांटम हॉल इफैक्ट की व्याख्या करते हुऐ डेविड थोलुज ने बताया कि द्वि–विन्यासी अथवा बिल्कुल पतली परत वाले पदार्थो में परम शून्य तापमान पर विद्युत धारा के छोटे छोटे भंवर रूपी बहुत ही नजदीक व कसे हुए जोडे बनते है जो कि थोडे से भी तापमान के अंतर पर तुरंत एक दूसरे से विलग होकर अकेले अकेले घूमनें लगते हैं जिसके कारण ऐसे पदार्थों की विद्युत चालकता में क्रमिक रूप से पूर्णांक पदों में वृद्धि होती है।

इस सिद्वांत की व्याख्या से पूर्व डेविड थोलुज व कोस्टरलिट्स द्वि–विन्यासी पदार्थों की अवस्था परिवर्तन के ऊपर उल्लेखनीय कार्य कर चुके थे। फलस्वरूप इन दोनो के ही नाम पर भौतिकी का एक प्रमुख सिद्वांत' कोस्टरलिट्ज– थोलुज' (KT) ट्रांजिशन' के नाम से जाना जाता है। इसके साथ ही डेंकन हेल्डन ने भी सन् 1982 में ही बतला दिया कि चुम्बकीय अणुओं की श्रृंखला भी एक टॉपोलॉजिकल घटना है। प्रारम्भ में उनकी घोषणाओं को सहजता से स्वीकार नहीं किया गया किंतु समय के साथ सभी अवधारणाओं को सत्य पाया गया।

तीनों वैज्ञानिकों के कार्य भौतिकी के क्षेत्र में अत्यन्त उल्लेखनीय व प्रशंसनीय हैं। इसके साथ ही वर्तमान की इलैक्ट्रॉनिकस व अतिचालकों के युग में व भविष्य के क्वांटम कम्प्यूटरों के लिए टॉपोलॉजिकल पदार्थों से जुड़ी ये खोजें निश्चय ही नये आयाम स्थापित करेंगीं।

चन्द्र कम्प

सुशील कुमार
वा.हि.भू.सं., देहरादून

आपने कभी अपने जीवन में भूकम्प के कम्पन का अनुभव किया है? कम्पन कभी–कभी बहुत तेज, कभी–कभी हल्के होते हैं। कम्पन तेजी से शुरू होते हैं और कुछ ही सेकण्डों में बन्द हो जाते हैं। यह पृथ्वी की परतों के भीतर गति के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होते है। हमें भूकंपीय तरगों के कारण कम्पन महसूस होता है। उर्जा पृथ्वी के भीतर फाल्ट से सभी दिशाओं में उत्सर्जित होती है। जैसे तालाब में लहरें, पत्थर के फेंकने से पैदा होती हैं और गोलाकार रूप में फैलती है। आपको विश्वास नहीं होगा चन्द्रमा में भी कुछ ऐसा ही होता है– आप इसका अनुमान लगा सकते हैं। उन्हें चन्द्रकम्प कहते हैं। चन्द्रमा पर कम्प पहली बार अपोलो अंतरिक्ष यात्री द्वारा खोजे गये थे। हालोकि चन्द्रमा पर रिकार्ड किये गये कम्प, भूकम्पों की तुलना में बहुत कमजोर होते हैं परन्तु पानी की कमी के कारण चन्द्रमा पर सिस्मिक तरंगो का जल्दी ही ह्रास नहीं होता है और वह मिनटों तक रह सकती है।

1960 के दशक से 1977 के अन्त तक भूकम्पीय गतिविधियों को ट्रैक करने वाले उपकरण सिस्मोमीटर को चन्द्रमा पर लैंडिग साइटों पर लगाया गया। चार अलग–अलग अपोलो मिशनों के अंतरिक्ष यात्री इन उपकरणों से डेटा को वापस लाये। नासा के वैज्ञानिक टुडी ई0 बेल ने अपनी एक रिपोर्ट में जो बताया वह आश्चर्यजनक है। सिस्मोमीटर के एक नेटवर्क ने जितने समय चन्द्रमा पर डेटा एकत्रित किया उस दौरान वहाँ दर्जनों भूकम्प रिकार्ड किये गये। कई भूकम्पों का मैग्निट्यूड रिक्टर पैमाने पर 5.5 मापा गया। मैग्निट्यूड 4.5 और उससे अधिक परिणाम के कम्प इमारतों एवं कठोर संरचनाओं को नुकसान पहुँचा सकते हैं। सिस्मोमीटर में रिकार्ड चन्द्र कम्प चार प्रकार के पाये गये। गहरे चन्द्रकम्प जो सम्भवत् ज्वार से उत्पन्न हुये थे। यह चन्द्र सतह से लगभग 700 किमी नीचे उत्पन्न होते है। दूसरे प्रकार के कम्प उल्काओं के टकराने की वजहो से थे तीसरे प्रकार के चन्द्रकम्प थर्मल कम्प थे यह सम्भवत् जमी हुई चन्द्रमा की परत पर सूर्य की किरणें पड़ती है तो वह फैलती है और उसके कारण चन्द्रकम्प होते हैं। और चौथे प्रकार के चन्द्रकम्प चन्द्रमा की सतह से 20 से 30 किलोमीटर नीचे आते हैं।

बेली ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि पहले तीन प्रकार के चन्द्रकम्प आम तौर पर हल्के और कम हानिकारक होते हैं। परन्तु उथले चन्द्रकम्प जो कि पृथ्वी पर आने वाले उथले भूकम्प की तुलना में लगभग पांच गुणा अधिक समय तक रहते हैं। कुछ चन्द्र कम्पन 10 मिनट तक जारी रहे। आमतौर पर भूकम्प 10 से 30 सेकंड तक रहता है और सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचाने वाले भूकम्प ज्यादा से ज्यादा 10 मिनट तक जारी रहते है। इसका मतलब है कि अगर भविष्य में कभी भी जब हम चाँद पर भवन निर्माण के कार्य के बारे में सोचेंगे तो हमें बुनियादी ढ़ाँचा लगभग ऐसा बनाना पड़ेगा जैसा कि हिमालय क्षेत्र में अपेक्षित है जहाँ 7.0 या उससे बड़े भूकम्पों की सम्भावना रहती है। हालंकि चन्द्रमा पर कम्पों की रिकार्डिंगा अपेक्षाकृत चन्द्रमा के सामने के छोटे क्षेत्र में हुई है। हम विशेष रूप से चन्द्र ध्रुवों से अनजान है। कम्प अन्य ग्रहों पर भी सम्भव है भविष्य में ऐसा नेटवर्क स्थापित करने के लिए तकनीकी की आवश्यकता होगी जो चन्द्रकम्प, सेटर्नकम्प, वीनस कम्प, मार्शकम्प इत्यादि को रिकार्ड करने में सक्षम हो।

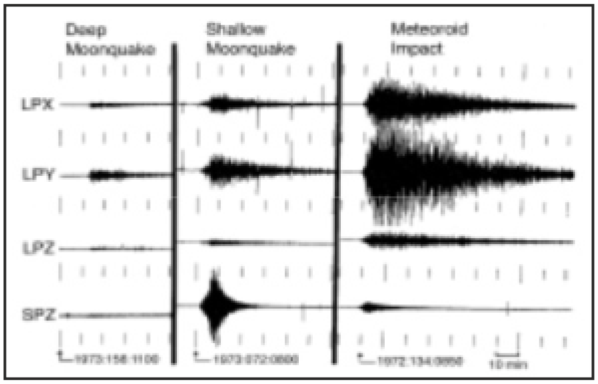

गंगा तथा उसकी पृथ्वी पर समयावधि

राकेश मोहन नौटियाल
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डाकपत्थर

गंगा जो भारतवर्ष की पवित्रतम् नदी है केदार हिमालय के दक्षिण प्रान्त त्रिलोक प्रसिद्ध गंगोत्री क्षेत्र से निकलती है– यत्र गंगाया महाभागे हिमवद्धक्षिण स्थले, गंगोत्तरमिति ख्याते त्रिशु लोकेशु विश्रुतम् केदारखण्डम् (12/5,), मत्स्य पुराण (121/127) पुराणों के अनुसार ब्रह्मपुरी मेरु में गंगा सीता, अलकनन्दा, चक्षु और भद्रा इन चार धाराओं में विभक्त हुई और इनमें सीता नाम की धारा पूर्व की ओर क्षीर सागर में, अलकनन्दा दक्षिण समुद्र में, चक्षु पश्चिम समुद्र में, और भद्रा' उत्तरी समुद्र में मिली (श्रीमद्भागवत (5/17/5–9), मार्कण्डेय पुराण (52/7), ब्रह्म पुराण (18/40–41, 175/4), विष्णु पुराण (2/2/34)) गंगा महादेव की जटा से निकल कर पूर्वी समुद्र में गिरी– ततः प्राप्तगिरि पुण्यं ततः पूर्वाणं प्रति (ब्रह्म पुराण (175/4)) हरिवंश पुराण के अनुसार भारत के उत्तर दिशा में क्षीर सागर था, विष्णु देवताओं की स्वर्ग विदाई के अनन्तर उस समुद्र में गए थे। पौराणिकों के अनुसार आज से 50 करोड़ वर्ष पूर्व अथवा उससे भी पूर्व जल प्लावन से जलमग्न भारतीय धरा का जल पौराणिक काल तक सूखकर चारों दिशाओं में सिमट गया था। गंगा जो वास्तव में गंगा, देवप्रयाग नामक स्थान में भागीरथी तथा अलकनन्दा के संगम के उपरान्त कहलाती है, परन्तु वास्तव में भगीरथ द्वारा लाई गई तथा गंगोत्री नामक स्थान पर जो गंगा नाम से अवतीर्ण हुई है वह भागीरथी नामक नदी है।

भागीरथी नदी का मूल उद्‌गम गोमुख नामक स्थान है। यही उत्तर पश्चिम की और बहना प्रारम्भ करती है। अनेक विद्वानों जिनमें मैक्रेण्डिल मुख्य रूप से हैं, ने गंगा का उद्‌गम स्थान अनिश्चित बताया है (मेक्रेण्डिल, जे.ओ. डब्ल्यू – एन्सियन्ट इण्डिया एँज डेसक्राइब्ड बाई मेगास्थनीज एण्ड ऐरियन (पृ. 64)) पुराणों ने पृथ्वी पर गंगा उद्‌गम को गंगावतरण के रूप में कथा का स्वरूप दिया है जिसके अनुसार गंगा तीन स्वरूपों में प्रदर्शित की गई है। पौराणिक गाथा के अनुसार गंगा विष्णुपदी अर्थात विष्णु के पैर के अंगूठें से निकलकर ब्रह्मा के कमण्डल में आई थी तथा भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर यह पृथ्वी पर आने से पूर्व शिवजटा में पहुँची, परन्तु उपरोक्त कथा को मात्र भ्रामक ही कहा जा सकता है। यद्यपि जो बात आधिदैविक जगत में सत्य है वह आधिभौतिक जगत में भी सत्य होगी, क्योंकि हमारा यह जगत आधिदैविक जगत का प्रतिरूप है। गंगा भगवान नारायण के चरणों से निकलकर भगवान शिव के मस्तक पर गिरी और वहाँ से पृथ्वी पर आई है, यह अधिदैविक जगत की घटना हमारे जगत में भी सत्य है। श्री बद्रीनारायण से आगे नारायण पर्वत है, नारायण पर्वत के नीचे (चरण प्रान्त) से ही अलकनन्दा निकलती है जो सतोपंथ होकर बद्रीनाथ आती है। वहीं नारायण पर्वत के चरण प्रान्त से भागीरथी या हिमप्रवाह चतुःस्तम्भ शिखर से मानव सुमेरु (स्वर्ण पर्वत) के पास होते हुए शिवलिंग शिखर पर आता है। यह शिखर गोमुख के दक्षिण में है। इससे नीचे उतरकर हिमप्रवाह से गोमुख में गंगा की धारा प्रकृति में व्यक्त होती है। अतः गंगावतरण जिसमें आधिदैविक तत्व है का आधिभौतिक विचारों से भी तारतम्य उचित ही है। गंगा को विष्णुपदी के अतिरिक्त जाह्नवी आदि नामों से भी पुराणों में पुकारा गया है। जाह्नवी (जाड गंगा) जो नीले पानी के साथ भैरों घाटी में जाँगल्य नामक स्थान पर गंगा में मिलती है। यह नदी तिब्बत के पठार से भारत–वर्ष में प्रवेश करती है। विमल चरण लाहा के अनुसार वस्तुतः जाड गंगा (जाह्नवी) के जल का परिमाण भागीरथी से अधिक था। जब जाह्नवी में भागीरथी का अस्तित्व विलीन हो गया तो भगीरथ ने पुनः तपस्या कर जह्नु ऋषि के जह्नु प्रदेश से भागीरथी को पुनः प्राप्त किया। शायद तब से दोनों की स्वीकृति से गंगा का नाम भागीरथी भी हो गया था (लाहा, विमलचरण – भारत का ऐतिहासिक भूगोल (पृष्ठ 132, 133, 134)) गढ़वाल के देवप्रयाग नामक स्थान पर जहाँ भागीरथी तथा अलकनन्दा अर्थात गंगा के दो स्वरूपों का संगम होता है के उपरान्त ही यह नदी गंगा कहलाती है।

अलकनन्दा जिसे पुराणों में मुख्य गंगा का गौरव प्राप्त है– अलकनन्दा तदा नाम गंगाया प्रथम स्मृतम् (पद्मपुराण (4/22/16), श्रीमद्देवीभागवत् 9/12) का उद्‌गम बद्रीनाथ के निकट गन्धमादन पर्वत है। गन्धमादन जिसे बद्रीनाथ के समीप माना जाता है, को तिब्बत के पठार से समीकृत किया जा सकता है। अलकनन्दा जिसका उद्‌गम गन्धमादन पर्वत से है आगे चलकर विष्णुप्रयाग नाम स्थान

पर धौली गंगा से मिलती है। धौली गंगा जो भारत चीन सीमा पर नीती दर्रे के पास निकलती है, यह अपना पानी कामेत और रैकना नामक हिमानियों से प्राप्त करती है। विष्णु प्रयाग के पास एक पवित्र विष्णु कुण्ड होने से इसके कुछ मार्ग को विष्णुगंगा भी कहते हैं। यह अपने मार्ग मे रुद्र गंगा, गरूड़ गंगा, पाताल गंगा और विरही गंगा से मिलती है। अलकनन्दा से आगे चलकर नन्द प्रयाग में नन्दाकिनी से तथा कर्णप्रयाग में पिण्डर नदी से संगमित होती है। नन्दाकिनी जो त्रिशूल पहाड़ी के पास पश्चिमी ढालों के हिमगारों से निकलती है, इसका एक नाम नन्दा भी है। पिण्डर जो कर्णप्रयाग के समीप अलकनन्दा में मिलती है का उदगम पिण्डारी हिमगार से होता है। यह हिमगार नन्दादेवी के समीप है। तदुपरान्त रुद्रप्रयाग में मन्दाकिनी नामक नदी अलकनन्दा में मिलती है। यह केदारनाथ के चौराचोरी हिमगार से निकलती है। मन्दाकिनी को काली गंगा भी कहा जाता है। पालि परम्परा में भी मन्दाकिनी अलकनन्दा की सहायक नदी ही मानी जाती है। इसके उपरान्त भागीरथी अलकनन्दा का संगम होता है जहाँ से यह गंगा के रूप में विश्वविख्यात हुई है।

गंगा का प्रर्यवसान कब होगा यह भी विचारणीय प्रश्न है इस सन्दर्भ में बहुत सारी कथायें पुराणों में उपलब्ध है देवीभागवत महापुराण के अनुसार गंगा को विष्णु जी ने कहा था कि गगें आने वाले कलियुग के 5000 वर्षो तक तुम्हे मृत्यू लोक का हित करना होगा कलियुग के 5000 वर्षो के पूर्ण होने पर तुम मेरा स्थान ग्रहण करोगी– अद्य प्रभृति देवेषि कलेः पंचसहस्त्रकम्। वर्ष स्थितिस्ते भारत्याः शापेन भारते भुवि (देवीभागवत महापुराण 9,11–46) अर्थात माँ गंगा को कलियुग में मात्र पांच हजार वर्षो तक ही रहना था पुराणों महापुराणों के अनुसार कलियुग का प्रथम मिलन कृष्ण के समय काल से कुछ समय पहले महाराज नल के राज्याकाल में हो गया था जिसने जुये में अपनी सारी संम्पति हार दी थी। (महाभारत वनपर्व) परन्तु कलियुग का मूल प्रारम्भ परिक्षित के समयकाल में हुआ। वर्तमान में कृष्णसंवत 5233 चल रहा है क्योकि कलियुग का मूल प्रारम्भ परिक्षित के समय काल में हुआ था। परिक्षित युधिष्ठिर का नाती तथा अभिमन्यु का पुत्र था। कृष्ण संवत का प्रारम्भ महाभारत युद्ध की समाप्ति तथा पांडवों के राज्यारोहण से माना जाता है। कुछ वर्षो तक राज्य करने तथा कृष्ण के गोलोक धाम गमन के उपरान्त युधिष्ठिर ने युवराज परिक्षित को राज्य प्रदान किया। राज्य प्राप्त करने के उपरान्त ही कलियुग का प्रारम्भ माना जाता है। अर्थात वर्तमान में कलियुग के 5000 वर्ष पूर्ण हो गये है। जो भगवान कृष्ण की आज्ञा थी कि कलियुग के 5000 हजार वर्षो तक तुम पृथ्वी पर रहोगी तथा मृत्यु लोक की सेवा करती रहोगी उसके अनुसार अब गंगा को अपने लोक गमन कर लेना चाहिये।

मात्र विष्णु की आज्ञा ही नहीं अपितु सरस्वती के श्राप के परिणाम स्वरूप भी गंगा को कलियुग में मात्र 5000 वर्षो तक ही रहना था जो अब पूर्ण हो गये हैं। पंचागो के अनुसार कलियुग के 5000 वर्ष पूर्ण हो गये हैं तथा गगां का पर्यवसान काल भी आ चुका है। वेसे माना जाय तो गगां की मूल विशेषता उसी दिन समाप्त हो गई थी जब टिहरी बांध के कारण भागीरथी का जल रोककर देवप्रयाग तक नहीं पहुँचने दिया गया तथा भागीरथी तथा अलकनन्दा का संगम नहीं हो पाया तथा तदुपरांत गंगा नहीं रह पाई अपितु वह मात्र अलकनन्दा बन कर रह गई। ब्रहमवैवर्त पुराण के अनुसार सरस्वती के श्राप के कारण गगां का वैभव मात्र 5000 वर्षो तक ही रहना था –

अद्य प्रभृति देवेशि कले पन्चसहस्त्रकम्, वर्ष स्थितिस्ते भारत्याः भापेन भारते भुवि।। (ब्रहमवैवर्त पुराण गगोंपाख्यान 18/2)

क्योंकि पुराणों की उपरोक्त अवधि समाप्त हो चुकी है और इसी नवीन औद्योगिक उत्कर्ष से गंगा की पवित्रता का अपकर्ष हो कर वह उत्तरोत्तर प्रदूषित होती जा रही है।

बासुंरी

संजीव डबराल
वा.हि.भू.सं., देहरादून

जब भी मैं बांसुरी की आवाज सुनता हुँ तो वर्षो पहले का वाकया मेरे स्मृति पटल पर घुमने लगता है और मैं उन पुरानी यादों में खोने लगता हुँ। शिवरात्री की छुट्टीयों में मैं शहर से अपने गाँव जाता था जहाँ पर शिवरात्री को मेला लगता था। आसपास के कई गाँव के लोग वहाँ आते थे। मेले जाने की उत्सुक्ता में सुबह जल्दी उठ जाता। फिर हम नहा धोकर अपने भाई बहनों और दोस्तों के साथ मेले के लिये चल पड़ते। हम तेज तेज और कभी तो दौड़ते हुये जाते कि कहीं मेले में हमें देर न हो जाये। हम सब को पिता जी पाँच–पाँच रूपये देते, जो की कहीं हम रास्ते में गिरा न दें, इस डर से बड़े भैया के सुपूर्द कर दिये जाते। मेला हमारे गाँव से करीब चार किलोमीटर दूर लगता था। आधा रास्ता तय करने के बाद मेले में बजते ढोल की आवाज सुनाई देने लगती और हम सब और तेज तेज चलने लगते की कहीं देर न हो जाए और सारा सामान खिलौने वगैरह बिक न जायें। मेले के करीब पहुंचते ही हमें हिदायत दी जाती की एक दुसरे का हाथ पकडकर रखना है और अगर खो जायें तो किस पेड़ के पास खडे रहना है।

मेले पहुँचते ही सबकी फरमाईश शुरू हो जाती, मैं यह लुंगा और मुझे यह चाहिये। अगर कोई रंगीन चश्मा खरीदता तो सब बारी बारी से उसको लगाकर मुआयना करते की उसके रंग ठीक हैं। कोई गुब्बारे वाली बीन खरीदता तो सब बजाकर देखते।

मेले में एक आदमी बहुत ही मधुर बांसुरी बजा कर उन्हें बेच रहा था। उसकी मधुर आवाज ने मुझे मोह लिया और मैं बांसुरी की जिद करने लगा। भैया ने बहुत समझाया की तु बजा नहीं पायेगा किन्तु मै कहाँ मानने वाला था जिद कर मै बांसुरी वाले के सामने खड़ा हो गया। आखिर भैया राजी हो गये और मेरे लिये बांसुरी ली। पर यह क्या? मैंने जैसे ही बांसुरी में फुंक मारी तो उसमें हवा निकलने लगी और सी सी की आवाज आने लगी। मैं फिर जिद करने लगा मुझे खराब बांसुरी दी गई, यह तो वैसे बज ही नही रही है जैसे बांसुरी वाला बजा रहा है। दो एक बांसुरी और बदली गई आखिर भैया के डाँटने पर चुपचाप मैने एक बांसुरी ले ली। मुझे अब तक याद है उसकी कीमत 50 पैसे थी। दिन भर हम मेला घुमते रहे। गोल गप्पे, टिक्की आदि खाई, गोल गप्पे का पानी कई बार लिया। वहाँ एक बडा सा झुला लगा था। भैया से जिद करके उसमे बैठे। झुला जब ऊपर से नीचे आता तो लगता वो टूट गया है और हम गिरने वाले है। फिर एक झटके से वह फिर ऊपर चला जाता। शाम के समय वहाँ एक बगीचे मैं दंगल हो रहा था। हम बच्चे तो युँ ही बीच में घुसकर सबसे आगे बैठ गये। एक एक कर पहलवान आते, ढोल की आवाज के साथ कुश्ती शुरू होती, हार जीत का फैसला होता और फिर दुसरे पहलवान आते यह क्रम काफी देर तक चला। आखिर में एक घोषणा हुई की जो भी कोई इस पहलवान को हरायेगा उसे ईनाम की राशि जो एक रूमाल में अखाड़े के कोने में एक डंड़े पर बंधी थी, जीतने वाली को दी जायेगी। इसके साथ ही एक लंबा गठीले शरीर का व्यक्ति अखाड़े में खडा हो गया। मैं उसे देख कर दंग रह गया क्यों की वह हमारे ही गाँव के सोम गुरू जी थे, जो पेशे से शिक्षक थे। कई बार घोषणा हुई परन्तु कोई भी पहलवान सोम गुरू जी से भिडने की हिम्मत न कर सका और वह बिना लड़े ही जीत गये। मैं कई बार मेले गया और मैंने देखा आखिर में उनका नम्बर आता और वह बिना लड़े जीत जाते। मेरी समझ में नहीं आया की उनसे भी लम्बे और मोटे पहलवान उनसे कुश्ती क्यों नहीं कर रहे है। मैंने सुना, अभी कुछ समय पहले ही उनका निधन हो गया है।

शाम हो गई थी और हम मेले से घर की और चलने लगे। तभी हमने देखा की मैदान के किनारे एक बहुत बड़ा जानवर बंधा है। भैया ने बताया यह ऊंट है। ऊंट हमने पहली बार देखा था। हम सब उसे और करीब से देखना चाहते थे पर भैया ने डरा दिया की पास जाओगे तो यह तुम्हारे बाल खा जायेगा। अंत में मन मारकर हम अपने दोनो हाथो से सर ढ़ककर उसे निहारने लगे। डर था कि कहीं वह हमारे बाल न खा जाए। अंधेरा होने पर हम घर पहुंचे। बांसुरी बजा बजा कर मेरी दोनों गालों का दर्द से बुरा हाल था। खाना खा कर मैं जल्द ही सो गया। अगले दिन सुबह से ही मेरा बांसुरी वादन शुरू हो गया जो दो तीन दिनो तक जारी रहा। आखिर बाँसुरी की आवाज से परेशान हो

घरवालों ने मेरी बांसुरी कहीं छुपा दी। एक दो दिन बाद मैं वापस शहर लौट आया और मेरी पढ़ाई शुरू हो गयी।

दिन, महीने साल निकलते गये। वक्त नदी के पानी की तरह अनवरत चलता चला गया। मुट्ठी में पकड़ी रेत की तरह इतना वक्त गुजर गया पता ही नहीं चला। पढ़ाई के बाद मेरी अपने ही शहर में नौकरी लग गई। एक बार गर्मियों में मैंने शहर की भागदौड़ और कोलाहल से दुर किसी शांत, सुन्दर और हरे भरे पर्वतीय स्थल पर जाने का प्रोग्राम बनाया और मैं अपने दो मित्रो के साथ छुट्टी लेकर निकल पडा।

सुबह की बस पकड़कर से चले हम शाम को एक बहुत ही खुबसूरत हरे भरे सीमांत गाँव में पहुंचे। सूरज छुपने ही वाला था, वैसे भी पहाड़ों पर रात जल्दी होती है। वहाँ पहुंचते ही हमें ठंड का अहसास हुआ और डाक बंगले पहुंचते ही हमे गर्म कपड़े निकालने पड़े। सफर की थकान के कारण खा पीकर हम जल्द ही सो गये।

सुबह चिड़ियों की चहचहाट से नींद जल्द ही खुल गई और हम कमरे से बाहर आ गये। बाहर का दृश्य देख हम सम्मोहित हो गये। चारो और बर्फ से ढकी एक सफेद पर्वतो की चोटियां और उन चोटियों से टकराकर आती सूरज की किरणें जो चारो और फैले हरे भरे पेड़ों पर पड़ रही थी। पेड़ो के पत्तों से छन–छन कर पड़ती और रात में घास पर पडी ओस ऐसे झिलमिला उठती जैसे दिवाली में लडियों के छोटे छोटे बल्ब जल रहे हों। बीच बीच में पहाड़ी चिड़ियो की मधुर चहचहाट मानो सुबह का संगीत से स्वागत कर रही हो।

इस बीच गरमा–गरम चाय आ गई और हम चाय की चुस्कियों के बीच प्रकृति के इस सुन्दर आगोश में खो गये। नाश्ता करने के बाद हम आसपास की पहाड़ियो पर घुमने गये। पतली पतली पगडंडियों पर चलते हम आगे बढ़ते जाते और प्रकृति का नजारा कैद करते जाते। बुरांश के हरे भरे जंगल ओर पेड़ो पर खिले चटक लाल रंग के बुरांश के फूल, दूर से देखने पर ऐसा लगता मानों किसी ने पहाड़ो को लाल रंग से रंग दिया हो। जगह जगह पके हुए काफल से झूकी टहनियाँ। रूक–रूक कर हम ताजे पके काफल भी खाते जाते। बीच बीच में सुस्ताते, झरनों का ठंडा–ठंडा पानी पीते और आगे बढ़ते जाते। दिन का खाना हम साथ लाये थे। एक साफ सुथरी चट्टान पर बैठ कर खाना खाया और आराम किया। फिर हम वापस लौट चले और शाम को वापस अपने डाक बंगले पर पहुंच गये। शाम को सेम की दाल, एक पहाडी सब्जी, मंडवे की रोटी खाकर हम खो गये।

यह सब अब हमारी दिनचर्या का हिस्सा हो गया। सुबह नाश्ता करते, दिन का खाना लेकर चलते और शाम तक वापस डाक बंगले आते और खाना खाकर सो जाते। एक दिन हमने दूसरी तरफ जाने का प्रोग्राम बनाया और नाश्ता करने के बाद हम चल पड़े। हरे भरे पेडो के बीच हम पंगडंडियों से आगे बढ़ते जाते। कुछ समय बाद पेड खत्म होने लगे ओर फुलों की झाडियां शुरू हो गयी और बीच – बीच में घास के मैदान नजर आने लगे। थोडा और आगे बढ़ने पर झाड़ियां भी खत्म हो गई और चारों और हरे भरे बुग्याल, जिन्हें घास के मैदान भी कहते हैं, आ गये।

बुग्याल में चारों और हरी–हरी मखमली घास बिछी थी जिन पर चलने से ऐसा लगता मानो कालीन पर चल रहे हों और घास के बीच खिले रंग बिरंगे फूल किसी और ही दुनिया का अहसास करा रहे थे। पहाड़ो की चोटियां पर जमी बर्फ का पिघल कर नीचे गिरता झरना और फिर पानी का एक छोटी सी नदी के रूप में बुग्याल के बीच से गुजरना किसी परीलोक जैसा ही था। ठंडी–ठंडी हवा चल रही थी सूरज सिर पर चमक रहा था परन्तु गर्मी का लेश मात्र भी अहसास नहीं हो रहा था। मैदान में बैठ कर हमने खाना खाया और वही पर लेट कर सो गये। समय का पता ही नहीं चला जब आंख खुली तो देर हो गयी थी। अचानक कानों में कहीं से बांसुरी की मिट्टी आवाज सुनाई देने लगी हमने चारो और नजरे घुमाई पर मीलो तक कोई भी दिखाई नहीं दिया। यह सोच कर कि कोई पहाड़ की ओट में होगा और हमें दिखाई नहीं दे रहा है। हम वापस चलने लगे।

गाँव के कोने में एक चाय की झोपड़ी नूमा छोटी सी दुकान थीं, जिसमें हम शाम को लौटते हुए यहाँ चाय पीते थे। दीवारे धुऐं से काली हो गयी थी। पत्थर जोड़ कर एक स्लेब बनाया हुआ था जिसमे लकड़ी जला कर वह चाय बनाता था। उबले हुऐ आलू जख्या में छोंक कर चाय के साथ खाने का अलग ही स्वाद था। हमें देख कर बोला आज आने में बहुत देर कर दी। मैं आप लोगों का ही इन्तजार कर रहा था। हमने बताया आज हम गाँव के दुसरी ओर दूर बुग्यालों पर घुमने गये थे। मैनें पूछा तुम्हारे गाँव का कोई आदमी बहुत ही अच्छी बांसूरी बजाता हैं, कौन है वह चाय बनाते बनाते उसके हाथ अचानक रूक गये, मानो कोई करंट लग गया हो।

कुछ समय के बाद उसने भर्राई हुई आवाज में बोलना शुरू किया और बोला साहब गाँव के नीचे जो एक खंडहर

देख रहे हैं न बहुत पहले ये जीतू का घर था। जीतू के पिता फौज में थे। इसी दौरान भारत–पाक लड़ाई शुरू हो गई और जीतू के पिता भी अन्य फौजियों की तरह लड़ाई में भेज दिये गये। परन्तु लड़ाई रूकने के बाद भी जीतू के पापा का कोई पता नहीं चला की वे मारे गये या पाकिस्तान के कब्जे में हैं। जीतू तब छोटा था घर पर उसकी मां थी और थाडी सी जमीन थी और कुछ बकरियां। घर की माली हालत भी अच्छी न थी। मां जमीन की निराई–गुडाई करती और जीतू बकरियां चराने निकल जाता। बचपन से ही उसे बांसूरी का शौक था। वह दिन भर बांसूरी बजाता और उसकी बकरियाँ आस पास ही चरा करती। वह इतनी अच्छी बांसुरी बजाता की चलते हुऐ आदमी के पांव रूक जाते और वह बांसुरी सुनने लगता। यह क्रम कई साल तक चलता रहा अब जीतू भरा पूरा नौजवान हो गया था।

चाय वाले ने आगे बताना शुरू किया, साहब मैंने उसकी बांसुरी नहीं सुनी न ही मैनें उसे देखा है यह बात तो मेरे पिता ने मुझे बताई थी जो अब इस दुनिया में नही रहे। और मेरे पिता ने मुझे बताया की जब जीतू बांसुरी बजाता तो उसकी बांसुरी की आवाज से आकर्षित होकर परीयों ने वहाँ आना शुरू कर दिया। दिन भर जीतू बांसुरी बजाता और परियां उसके चारों ओर नाचती रहती। यह क्रम निरंतर चलता रहा। जीतू अब गूमसुम सा रहने लगा। किसी से कोई बातचीत न करता। एक बार जीतू को परियों ने कहा की हमारी रानी न तुम्हें बुलाया है वह तुम्हारी बांसुरी सुनना चाहती हैं। जीतू ने बहुत मना किया किन्तु परियां नहीं मानी और जबरदस्ती जीतू को अपने साथ ले गई। शाम को सारी भेड बकरियाँ वापस अपने घर पहुँच गई। परन्तु उसके बाद जीतू नहीं लौटा। रात भर उसकी मां इन्तजार करती रही। सुबह गांव के लोग भी उसे ढुढ़ने निकले परन्तु उसका कुछ पता नहीं चला। उसकी मां भी दिन भर पहाड़ों पर जीतू जीतू पूकारते हुऐ भटकती। कुछ समय बाद उसकी मां को भी गाँव वालो ने नहीं देखा।

गाँव से दुर उन बुग्यालों में जीतू की बांसूरी की मधुर आवाज आज भी सुनाई देती है। गाँव वालो ने उधर भेड बकरियाँ चराना बंद कर दिया है। चाय वाले ने बताया की घाटियां में अब भी कभी–कभी, जीतू–जीतू पूकारते हुए उसकी मां की आवाज आती है। चाय खत्म हो चुकी थी। हम सब खामोशी के साथ अपने डाक बंगले की ओर चल पडे। रात भर मुझे नींद नही आई। चाय वाले के कहे एक एक शब्द घटना बनकर मेरी आँखो के आगे मचलते रहे। नींद कब आई पता ही न चला। सुबह तेज हार्न की आवाज से मेरी आँख खुली। मैं जल्दी जल्दी तैयार होने लगा। आज हमें वापस शहर लौटना है। बाहर बस हमारा इन्तजार कर रही थी।

भूविज्ञान पर हावी होते अन्य विज्ञान

अजय कुमार बियानी
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

हमारी धरा विधाता की अदभूत कृति है। इसका उद्भव और विकास को अगर हम सर्वागीण रूप से परखने अथवा जानने की कोशिश भी अगर जरा सी करे तो आश्चर्य से दांतों तले उंगली आ जाए तो अस्वभाविक कुछ नही होगा। अनादिकाल से हजारों तरह की प्रक्रियाओं ने पृथ्वी को वर्तमान रूप में गढ़ा। पृथ्वी को सतत चेतन अवस्था मे रखने के लिए आत्मा स्वरूपी ऊर्जा का अक्षय स्त्रोत कहाँ से संचालित हो रहा है, यह अभी रहस्य बना हुआ है जो पृथ्वी के उपर तथा अन्दर आश्चर्यजनक गतिविधियों को संचालित करता है।

जीव विकास की अनवरत प्रक्रिया ने जीवन के लिए चुनौतियाँ ही उत्पन्न नही करी बल्कि चुनौतियों मे जीवन को बचाए रखने के लिए अवसर भी प्रदान करे। आज शोर इतना है कि हम 'मौसम परिवर्तन' या 'भूमंडलीय उष्मीकरण' (global warming) के कारण अपने अस्तित्व के बारे मे सर्वाधिक चिंतित हो गए है कि हम कल का सूरज देख पायेंगे या नहीं। चिंता स्वभाविक भी है और बेबुनियाद भी है। आज दुनिया मे एक होड़ लगी है दोषी ठहराने की, सभी जानकार वर्तमान की समस्याओं के लिए, खासकर पर्यावरण से सम्बंधित, मनुष्य को दोषी ठहरा रहें हैं। दोष रूपी समुद्र में नहाते–नहाते हम सभी अपने आप ग्लानि युक्त हो स्वयं को दोषी मानने लग गए हैं। पर्यावरण बचाने के नाम पर हर सुझाव हर कदम जायज़ लगने लगते हैं। पर्यावरण रूपी मृगमरिचिका की अंत हीन दौड़ कहाँ पर खत्म होगी, कुछ कह नही सकते है। इस अन्त हीन दौड़ में सबसे अधिक कुचले जाना वाला है हमारा भूविज्ञान। आज भूविज्ञान पर कई विषय इस कदर हावी हो गए हैं कि हमें 'शोध पत्रों' मे भूविज्ञान ढूढ़ना मुश्किल हो गया है। यह स्थिति पर्यावरण विज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, गणित जैसे मूल भूत विषयों के अलावा प्रयुक्त विज्ञान तथा कम्प्यूटर विज्ञान, सिविल इंजीनियरिंग, फ्रकटल, रिमोट सेन्सिंग, साँख्यिकी स्टीक्स इत्यादि। इनके विषयों के अलावा भूविज्ञान में एक से एक अति महगें और अत्याधिक संवेदनशील सूक्ष्मतर जानकारी देने वालों उपकरणों का उपयोग होने लगा है, जिनके बारें में सामान्य भूवैज्ञानिक परिचित भी नही होते हैं। बाहरी विषय और उपकरणों के ताल मेल ने उन शब्दावलियों का जन्म दिया जो सामान्य विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों से इतर है। इन सबका नतीजा यह है कि आज एक भूवैज्ञानिक दूसरे भूवैज्ञानिक से लगभग विषय की जानकारी में अपरिचित सा हो गया है। अर्थात हम अपने ही घर में पराये हो गये हैं। इसे समय की आवश्यकता बोलें या यह स्वीकार करें कि हम दौड़ में पिछड़ रहे है, कुछ समझ कर रास्ता निकालना ऐसा लगता है कि भूलभुलैया मे खो जाने जैसा।

भूविज्ञान मूलतः 'एक फील्ड साईन्स' है, फील्ड साईन्स' की अपनी सीमाएं होती है, बहुत अधिक गहराई तक फील्ड आबर्जवेशन' के आधार पर झाँका नही जा सकता है; परन्तु फिल्ड आबर्जवेशन' से पृथ्वी द्वारा संचालित क्रिया प्रणाली का सही – सही आकलन करा जा सकता है। विशाल पृथ्वी विविधता से परिपूर्ण है। पृथ्वी को समझने के लिए हम अगर फिजिक्स, केमेस्ट्री, गणित जैसे विषयों की रेखीय प्रणाली को अपनाए तो नतीजे अपेक्षित नही निकल सकते हैं, जबकि आज का जमाना रेखीय प्रणाली वाले नतीजों का है। बने बनाये ढ़ाचों और सिद्धान्तों से प्रस्तुत नतीजे सर्व स्वीकार्य हो गए है। अगर कोई हटकर बात करे तो उसे सुनने के लिए कोई तैयार भी नही है। रिसर्च के नाम पर केस स्टडी हो रही है और जो जितनी आडम्बर युक्त रिर्पोट देगा वह उतनी ही प्रभावप्रद होती है। पृथ्वी का तापमान पोस्ट ग्लेशियल मेक्सिमम से अभी तक 4–50 सेन्टी ग्रेड बढ़ा है, यह आगे कितना बढ़ेगा अथवा अधिकतम कितना जा सकता है, इसके बारे मे कोई बोलने को तैयार नही है। अगर पृथ्वी पर हुए जलवायु परिवर्तनों के इतिहास पर नजर डाले तो भूवैज्ञानिक रिकार्ड साफ–साफ यह बताता है कि पूर्वकाल मे कोई अनहोनी घटना मौसम के साथ नही हुई थी, सारे के सारे अवसादी शैलों के रिकार्ड चाहे आज के हो या अति प्राचीन युग वर्तमान के मौसम की रेंज के आसपास ही घूमते नजर आतें है। भूवैज्ञानिक सीमाओं के चलते जो पहले मिलता था वह अब भी मिल रहा है या बन रहा है। पृथ्वी पर मौसम परिवर्तन एक दीर्धकालिक घटना है न कि अल्पकालिक। जब–जब पृथ्वी पर ग्लेशियर आए, उन्होंने

अपना साम्राज्य हजारो लाखों साल नहीं बल्कि करोड़ों साल तक अक्षुण रखा। ग्लेशियर बनने के कई कारण हैं उसमे एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण है पृथ्वी के किसी भाग' का स्नो लाईन' से उपर उठ जाना। आज हिमालय में स्नोलाईन 5000–6000 मीटर के मध्य में है और हिमालय की पचासों चोटियाँ इस लाईन से कही अधिक उँची है। वातावरण गर्म होने से स्नो लाईन उपर उठ सकती है परन्तु इतनी भी नहीं कि ग्लेशियर शून्य पहाड़ हो जाएं। हम गंगा के बारे मे ऐसे चिंतित होते है कि पवित्र गंगा ग्लेशियर समाप्त होने पर अस्तित्व विहीन हो जाएगी, परन्तु एक बात जो नहीं बताई जाती है कि गंगा में बहने वाले जल का एक बडा हिस्सा ' ग्राऊन्ड वाटर ' से प्राप्त होता है।

आज चारो तरफ विकास की बात होती है और इस पर चुनाव भी जीते जाते है क्योंकि विकास की संधारणा को जन समर्थन प्राप्त है। हर कोई विकास चाहता है। क्या विकास बिना विनाश या 'डिस्टर्बेन्स' के संभव है? यह हो ही नही सकता है कि विकास हो पर विनाश न हो। विकास की नीव ही विनाश पर है, विनाश से उत्पन्न परिस्थिति या वस्तु हमारे क्या लाभदायक होती है। इसको कौन मना कर सकता है। मन बहलाने के लिए नये–नये जुमलों का प्रयोग किया जाता है यथा समन्वित विकास; क्या समन्वित विकास बिना विनाश या बिना परिवर्तन करे संभव हैं। पृथ्वी खुद अपने' सस्टेनेबल डेवलेपमेन्ट' में विश्वास नही रखती है अगर रखती होती तो दसियों बार महाद्वीपों मे वियोग – संयोग नहीं होता और आज समुद्रों का धरातल भी उतना ही पुराना होता जितना महाद्वीपों का आन्तरिक भाग। दूसरा जुमला 'इको सेन्सटीव जोन' का है। पृथ्वी के कुछ हिस्सों को इस तरह पेश किया गया है जैसे मरणासन्न व्यक्ति। आज तक न तो इको सेन्सीटीव जोन का गुणात्मक अथवा संख्यात्मक आधार पर परिक्षण किया गया है और न ही किसी ऐसे क्षेत्र की पहचान की गई है कि जिसमे एक वृक्ष काटने या एक पत्थर हटाने से भारी परिवर्तन रातों रात देखने को मिला हो।

आज पर्यावरण या किसी अन्य नाम का सहारा लेकर विरोध करना एक नियति बन गया है। विरोध में विरोधाभास बहुत अधिक। अगर मेरे गांव या घर से सडक आए, बिजली आए पानी आए या कोई अन्य सुविधा का निमार्ण हो या जंगल काटकर खेत या रिहायशी क्षेत्र बनाना हो तो हर पहलू को नजर अंदाज कर देगे। परन्तु ऐसी चीज या निमार्ण जिससे से मुझे फायदा न हो रहा हो, परन्तु पड़ोसी को उसका लाभ मिल रहा हो तो पुरजोर विरोध चाहे उसके लिए कोर्ट मे भी जाना पड़े। सरकार को बाँध नहीं बनाने देंगे, सुरंग नहीं बनाने देंगे, खनन नहीं करने देंगें क्योकि भूविज्ञान फ्रेजाईल है, पर्यावरण प्रतिकूल हो जाएगा, जल संसाधन नष्ट हो जायेगें इत्यादि। एक बांध और झील में देखा जाए तो अन्तर सीधे इतना है कि एक को मनुष्य ने बनाया है दूसरे को प्रकृति ने। दोनो ही जल संग्रह कर रहे है एक कत्रिम रूप से और दूसरा प्राकृतिक रूप से। प्रभाव दोनो के ही एक जैसे होगें। एक स्वीकार्य है, दूसरा नही। जब अपनी बात रखने के लिए अधकचरे भूविज्ञान के ज्ञान का सहारा लिया जाता है तो बड़ी दुखदायी स्थिति हो जाती है। कभी भूकम्प के नाम से, कभी भूस्खलन के नाम से और कभी 'फ्रजाईल' समाज में भय उत्पन्न किया जाता है और इसमें भू–विज्ञानी का भी सहयोग मिल जाता हैं। जो 9 मेग्नीट्यूड के भूकम्प की भविष्यवाणी कर देते हैं। आंख और दिमाग बंद कर पूरे हिमालय में 'फ्रेजाइल' ब्रांडेड कर दिया जाता है। Q,RQD,GSI जैसी शब्दावली को कितने लोग जानते है? यही वें शब्द जो शैलो की 'फ्रेजी लीटी' के पैमाने है। अच्छा खासा पसीना बहाना पडेगा तब इन शब्दों के अर्थ निकल पायेंगे। यह भी सत्य है कि हम जैसे–जैसे हिमालय के अन्दर की ओर जायेगें, शैले दृढ़ होती जाती है और जो धरातल पर दृष्टिगोचर होती है, उससे कही अधिक अन्दर की ओर होती है। नदी मे खनन बंद होने की बात हो तो हम सबसे आगे। अगर खनन बंद हो जाएगा तो निर्माण कैसे होगा रेत बजरी तो प्रकृति जन्य प्रदार्थ है, इनके निमार्ण में मनुष्य की कोई भूमिका नही होती है। खनन मे मनुष्य की भूमिका रहती है मनुष्य अपने स्वार्थ अथवा लालच के चलते अत्याधिक खनन कर प्रतिकूल स्थिति उत्पन्न कर देता हैं, इसके लिए भूविज्ञान को कदापि दोषी नही ठहरा सकते है। अगर दोषी है तो प्रशासनिक व्यवस्था जो अवैध के प्रति आंखे मूंदी रहती है। बडे बांधों मे संग्रहीत जल बिजली खेती, पीने, उद्योग, पयर्टन जैसे कई कामों मे आता है। खेती से हरियाली उत्पन्न होती है तो वह पर्यावरण के अनुकूल है या प्रतिकूल, पौधो द्वारा कार्बन डाईआक्साइड के माध्यम से अपना भोजन बनाना क्या वातावरण से कार्बन डाईआक्साइड की मात्रा कम नहीं कर रहा है। क्या उद्योग बिना पानी के संभव है। दिल्ली में टिहरी बांध का जल नहीं होता तो क्या दिल्ली में मौजूदा जनसंख्या को पानी उपलब्ध कराने की क्षमता है? क्या हम 'रन आफ रीवर' पर आधारित योजना से देश की बडी समस्याओं का समाधान कर सकते है? बांधो में संग्रहीत होने वाला जल वर्षा का होता है ठंड अथवा गर्मी के मौसम

में बहाव का जल अपेक्षाकृत काफी कम मात्रा में होता है। कोई भी बड़ा बांध अच्छे खासे परीक्षणों एंव अन्वेषण के बाद बनता है। अगर सही सही प्रकिया का पालन करा तो कोई कारण नहीं है कि बांध किसी तरह की समस्यायें उत्पन्न करे। बांध भरने पर कुछ समस्याएं स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होती हैं और उनका निराकरण भी करा जा सकता हैं। समस्याओं के कारण बांध न बनाया जाय या खनन नही हो, यह गलत ही नही बल्कि राष्ट्रीय संपति के साथ अपराध भी है। लचर व्यवस्था के चलते आज उत्तराखण्ड अपनी क्षमता का 10 प्रतिशत ही जल विद्युत उत्पादन कर रहा है। अगर पूर्ण बिजली उत्पादित होने लगे तो इसके दूरगामी प्रभाव हर क्षेत्र मे देखे जा सकते हैं। कुछ समस्याएं प्रशासनिक उपेक्षा या नजर अन्दाजी के कारण होती है, इस कारण भूविज्ञान को दोषी ठहराना नितान्त रूप से गलत है। खनन मे कानूनों का पालन नही ंहो रहा है तो भूविज्ञान कहाँ जिम्मेदार है?

आज आवश्यकता है कि भूवैज्ञानिक या भूविज्ञान से जुड़े हुए व्यक्ति किसी साझा मंच के माध्यम से अपनी तथ्यपरक बातें समाज से मीडिया के द्वारा रखे और जनता को सही स्थिति से अवगत करायें। विकृत रूप से प्रस्तुत तस्वीर समाज मे निर्मूल शंकाओ को जन्म देती है तथा एक अविश्वास का वातवरण उत्पन्न करती है यथा लेन्ड स्लाइड से बंद रास्तों की खबरे तो मीडिया में जोर शोर से उछलती परन्तु रास्ते कुछ ही घंटो मे खुले जाते है इसकी कोई खबर नहीं होती है। आदर्श पर्यावरण का निमार्ण जब पृथ्वी ने स्वंय नहीं करा है तो हम क्या कर लेगें। वर्तमान मे पृथ्वी पर एक जगह ग्लेशियर है तो दूसरी तरफ रेगिस्तान। ग्लेशियर बर्फ भंडार होते हुए भी पीने का पानी इनके आसपास नही मिलता है तो ऐसी स्थितियाँ किस रूप मे आदर्श हो सकती है। पृथ्वी कभी भी आदर्श स्थिति में नहीं रही थी और नहीं रह सकती है, हमारा प्रयास होना चाहिए कि स्थिति खराब न हो। भूवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ अपने स्वरूप के अनुसार चलती है और उनसे उत्पन्न बदलाव को हम चाह कर भी रोक नहीं पायेगें।

वैदिक काल मे भारतीय विज्ञान एंव संस्कृति सर्वोपरि थी ?

पी.एस. नेगी
वा.हि.भू.सं., देहरादून

इस पृथ्वी पर मानव सभ्यता के विकास में कई चरण आये एवं जब से आपसी विचारों के आदान–प्रदान के लिये संकेतो, वाद्ययंत्रो, विभिन्न प्रकार की आवाजों के इस्तेमाल की जगह भाषाओं की खोज हुई तभी से प्राकृतिक रूप से जिज्ञासू मानव ने सांस्कृतिक, सामाजिक–आर्थिक गतिविधियों को लिपिबद्ध करना प्रारम्भ कर दिया था। भारतीय विज्ञान व संस्कृति का इतिहास भी क्रमिक विकास के पथानुक्रम से गुजरता हुआ वैदिक काल तक पहुंचा। वर्तमान में उपलब्ध प्रमाण स्पष्ट करते हैं कि वैदिक काल के दौरान तथा मुगलो व अंग्रेजों के आक्रमणों से पूर्व भारतीय समाज व विज्ञान विश्व में सर्वोपरि व अग्रणी था। आम जनमानस उच्च सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक मान दण्डो का स्वतः पालन कर रामराज्य को चरितार्थ करता था। अठ्ठारहवीं सदी तक भारत में उच्चतम धार्मिक एवं सांस्कृतिक – आर्थिक मानदण्डों की झलक लार्ड मैकाले द्वारा ब्रिटिश संसद में दि. 2.2.1835 दिये गये भाषण से दिखाई देती है। मैकाले ने कहा था

"मैंने पूरे भारत की लगभग सभी दिशाओं मे यात्राऐं की हैं और मुझे पूरे दौरे मे न तो काई भिखारी व्यक्ति दिखा और न ही कोई चोर। मैने इस देश की अमूल्य सम्पन्नता को देखा है, जहाँ गहरे नैतिक मूल्य व्याप्त हैं और लोग क्षमताओं से परिपूर्ण हैं। और मैं समझता हूँ इस देश पर विजय पाना हमारे लिये सम्भव नहीं होगा जब तक हम इस देश की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत के रूप मे मौजूद रीढ़ को नही तोड़ देते"।

विज्ञान के जिन आविष्कारों के लिये विकसित देश आज इतराते हैं वे वैदिक काल में समुचित विकास हेतु जनमानस द्वारा उपयोग में लाई जाती थी। कुछ आविष्कार या वैज्ञानिक परम्परायें जैसे शिक्षण संस्थाओं के शरारती बच्चों को दण्ड बैठक लगवाना या मुर्गा बनवाना, पूजा अर्चना मे सभी मंत्रो के साथ हरिओम शब्द का उच्चारण, भारतीय महिलाओं द्वारा माथे पर बिन्दी लगाना व भारतीय द्वारा विभिन्न प्रकार के तिलक लगाना, तुलसी, पीपल आदि की पूजा एंव संरक्षण, पूजा के दौरान शंख नाद करना, भोजन में विभिन्न औषधियों का मसाले के रूप मे प्रयोग, केले व पलाश के पत्तो में भोजन करना लड़के–लड़कियों के कान व नाक छेदन, बुजुर्गो का चरण स्पर्श सम्मान करना, गाय के गोबर से घर लेपन, एवं प्राणायाम आदि आज भी विकसित देशो की समझ से परे है या कुछ पारम्परिक क्रियायों का वैज्ञानिक परिक्षण कर अब स्वीकार करने लगे हैं।

वस्तुतः ये सभी प्रक्रियायें विभिन्न कमियों या दोषों के या तो उपचार हैं या शारिरिक, मानसिक, बौद्धिक क्षमता को बढ़ाने वाले कार्य कलाप है जो सामाजिक ताने–बाने के साथ जुड़ कर सांस्कृतिक परम्पराओं के माध्यम से समृद्ध राष्ट्र का निर्माण करती हैं।

वैदिक काल के विज्ञान प्रचार, प्रसार की सबसे अनुकरणीय खूबी यह है कि उस समय विज्ञान आमजन की भाषा मे सुलभ होकर सामाजिक रूप से उपयोग मे लाया जाता था जिसे विज्ञान एवं समाज एक दूसरे के अनुपूरक थे जबकि वर्तमान समय में विज्ञान को आम आदमी से जोड़ने हेतु कई सरकारी परियोजनायें होने के बावजूद भी वांछित परिणाम आने शेष हैं।

वैदिक काल की सबसे अनूठी कृतियों विशेषकर चार वेद (ॠग्वेद, यर्जुवेद, सामवेद व अथर्ववेद) का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि भारत को सोने की चिड़िया क्यों कहा जाता था। सभी बड़े विद्वान और शोध कर्ता वेदों को मानव सभ्यता की सबसे पुरानी पुस्तकों के रूप में स्वीकार करते हैं। यहाँ तक कि जाने–माने इस्लामिक विद्वान अब्दुल्ला तरिक भी वेदो को प्रथम ईश्वरीय किताब मानते है।

वैदिक काल मे समाज बहुत ही सुव्यवस्थित था एवं उच्च वैज्ञानिक तकनीकी का सामाजिक उत्थान हेतु अनुसरण करता था।

भारत मे विज्ञान का उद्‌भव एंव विकासः भारत में विज्ञान का उद्‌भव ईसा से 3000 वर्ष पूर्व माना जाता है। प्रागऐतिहासिक काल मे सर्वश्रेष्ठ विज्ञान परख होने का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वर्तमान मे विकास की पराकाष्ठा प्राप्त करने वाले यूरोपीय देश जब घुमक्कड़ जातियों के रूप में बस्तियाँ बसाना सीख रहे थे

उस समय भारत में सिन्धु घाटी के लोग सुनियोजित रूप से नगर बसा कर रहते थे तथा उस समय तक भवन निर्माण, धातु विज्ञान, वस्त्र निर्माण, परिवहन – व्यवस्था आदि उन्नत दशा में विकसित हो चुके थे। फिर आर्यों का साथ मिलने के बाद भारतीय विज्ञान और भी उन्नतशील बन गया। भारत मे उच्च वैज्ञानिक परम्परायें ईसा के जन्म से लगभग 200 वर्ष पूर्व से प्रारम्भ होकर लगभग 11 वीं सदी तक उन्नति के मार्ग पर प्रशस्त रहीं। इसी काल मे भारत मे विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिकों व युग दृष्टाओं जैसे आर्यभट्ट, ब्रहमगुप्त, वराहमिहिर, चरक, बोधायन, नार्गाजुन, कणाद, सुश्रुत से लेकर सवाई जयसिंह आदि ने अपनी कृतियों द्वारा देश को शक्तिशाली बनाया। मध्यकाल में मुगलों के लगातार आक्रमणों के कारण भारतीय विज्ञान का विकास अवरूद्ध हो गया किन्तु उपलब्ध वैदिक साहित्य महत्वपूर्ण होने के कारण आक्रमणकारियों द्वारा इसका फारसी व अरबी भाषा में बहुतयात मे अनुवाद किया गया। फलस्वरूप भारतीय पारम्परिक विज्ञान का प्रचार – प्रसार अन्य देशों तक हो गया। अन्य देशों ने भी अपने विकास मे भारतीय विज्ञान का पूर्ण रूपेण फायदा उठाया।

मुगल शासन के समाप्ति के पश्चात् अंग्रेजी हुकुमत के आने से भारतीय विज्ञान के विकास में फिर से तेजी आई। किन्तु अधिकांश आविष्कारों का श्रेय भारतीयों को नहीं मिल पाया। और कई बार तो अंग्रेजों ने श्रेय लेने हेतु भारतीय आविष्कारकों को पुरस्कार देने के बजाय यातनायें तक दी हैं।

भारतीय सांस्कृतिक विज्ञान की अवधारणा: पुरातन भारतीय संस्कृति का सबसे उजला पक्ष यह रहा कि संस्कृति धर्मपरायण होने के साथ साथ विज्ञान परख थी। विज्ञान को संस्कृति के माध्यम से पारम्परिक रूप से संरक्षित किया गया

जोशीमठ

रामेश्वरम

द्वारिका

जगरनाथ पुरी

केदानाथ

जिससे भावी पीढ़ी स्वतः ही लाभान्वित हो सके। इसीलिये भारत के गौरवशाली वैज्ञानिक इतिहास में संस्कृति का विशेष योगदान रहा है। अतीत के झरोखे से देखे तो आदि गुरू शंकराचार्य का सांस्कृतिक व धार्मिक योगदान भारत का स्वर्णिम इतिहास दर्शाता है कि तत्कालीन विज्ञान के पैरोकार व धर्मावलम्बी इतनी दूर दृष्टि रखते थे कि राष्ट्रीय एकता के साथ–साथ वैश्विक समन्वयक की भूमिका भी निभाते थे। लगभग 800–500 बी.सी पूर्व तथाकथित रूप से लिखित धार्मिक उपनिषदों में भी "वसुधैव कुटुम्बकम" की परिकल्पना की गई थी। जिसको आज सम्पूर्ण विश्व वैश्विक गांव की संज्ञा देकर विज्ञान की पराकष्ठा के साथ जोड़ रहा है। सम्पूर्ण भारतवर्ष को धर्मपरायण बनाने एंव सामाजिक – आर्थिक व सांस्कृतिक रूप से एक जुट रखने के लिये आदि शंकराचार्य ने सम्पूर्ण भारतवर्ष मे चार मठों या धार्मिक केन्द्रो की स्थापना की थी। ये धार्मिक केन्द्र उत्तर भारत में उत्तराखंड राज्य मे स्थित चमोली जनपद के जोशीमठ स्थान पर, दक्षिण भारत में तमिलनाडू राज्य के रामेश्वरम जनपद के रामेश्वरम (श्रृंगेरी) में, पूर्वी भारत में उड़ीसा राज्य के पुरी जनपद के पुरी नामक स्थान में तथा पश्चिम भारत में गुजरात राज्य के द्वारका जनपद मे द्वारका नामक स्थान पर स्थापित किये गये थे। (चित्रः 1–4)।

शंकराचार्य शब्द साधारणतः अद्वैत परम्पराओं के मठों के प्रमुखों हेतु उपाधि स्वरूप उपयोग लाया जाता है तथा शंकराचार्य को हिन्दू धर्म में सर्वोच्च गुरू माना जाता है जैसा कि बौद्ध धर्म में दलाईलामा, इसाई धर्म में पोप की स्वीकार्यता है। वर्तमान में विज्ञान संगत संस्कृति की परम्पराओं व धार्मिक जीवन शैली का प्रचार–प्रसार करने हेतु उपरोक्त चार मठो के अतिरिक्त भारत वर्ष के विभिन्न हिस्सों में शंकराचार्यो के शिष्यों ने अपने–अपने मठ स्थापित कर अपने आप को शंकराचार्य घोषित कर दिया है जिससे शंकराचार्यो की संख्या चार से अधिक हो गई है।

आदि शंकराचार्य ने भारतीय सनातन धर्म के प्रचार प्रसार हेतु उपरोक्त चार मठो के अतिरिक्त बारह ज्योर्तिलिगों की स्थापना की थी। इन मठो में शिष्यों को सन्यास की दीक्षा दी जाती है एवं सभी सन्यासी अलग–अलग मठो से जुड़े रहते है तथा गुरू शिष्य परम्परा का अनुपालन करते है। आदि गुरू शंकराचार्य भारतीय जीवन दर्शन के प्रणेता माने जाते हैं। वे भारत के विभिन्न मतो सम्प्रदायों के समन्वयक व एकता के महान पोषक थे। यद्यपि उनका जन्म दक्षिण भारतीय राज्य केरल में कालड़ी नामक गाँव में हुआ था किन्तु उनकी तपोस्थली हिमालय क्षेत्र केदारनाथ रही थी (चित्र 5)। ऐसा प्रचलित है उन्होंने मात्र 32 वर्ष की उम्र मे भारत की तीन परिक्रमायें की थी और अन्तिम बार केदारनाथ से लौटते वक्त श्रीनगर, गढ़वाल नामक स्थान पर उनकी मृत्यु हो गई थी।

प्राचीन भारतीय विज्ञानः भारत में अनुसंधानों व आविष्कारों की परम्परा अनादिकाल से चली आ रही है। लगभग 3300–1700 बी.सी. पूर्व सिन्धु घाटी की सभ्यता के प्रमाण इगित करते हैं कि उस दौरान लोग सुनियोजित नगर जीवन यापन करते थे। उस समय भवन स्नानागार, नालियां, सड़क व कोठार आदि पक्की ईटों के बने थे। तत्कालीन समय में नाप तोल की इकाइयों का उपयोग होता था व परिवहन के लिये बैल गाड़ी उपयोग में लाई जाती थी। यह लगभग "कांस्य युग" के समकालीन जान पड़ता है। वस्तुतः कांस्य युग में इतनी उन्नत व प्रगतिशील वैज्ञानिक समाज भारत के अलावा विश्व में अन्यत्र नहीं प्रमाणित हुआ है।

वैदिक काल में खगोल शास्त्र का अच्छा ज्ञान भारतीयों को था। वे 27 नक्षत्रों, वर्ष, महीनो व दिनों के रूप में समय का विभाजन करते थे। "लगध" नाम के ऋषि ने "ज्योतिष वेदांग" तत्कालीन खगोलीय ज्ञान को लिपिबद्ध कर दिया था। प्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक कापरनिकस से लगभग एक हजार वर्ष पूर्व, आर्य भट्ट ने पांचवी शताब्दी में पृथ्वी की गोल आकृति एवं इसके अपनी धुरी पर घूमने की पुष्टी कर दी थी। इसी प्रकार न्यूटन से एक हजार वर्ष पूर्व ही ब्रहमगुप्त ने पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल की खोज कर दी थी किन्तु भारत में वांछित प्रचार–प्रसार व प्रकाशन व्यवस्था न होने के कारण इसका श्रेय पाश्चात्य वैज्ञानिक को मिला। वैदिक आर्य सूर्य की उत्तरायण व दक्षिणायन गति से परिचित थे। "लगध" ऋषि ने ईंसा से लगभग 100 वर्ष पूर्व वैदिक कालीन खगोल विज्ञान के एक मात्र ग्रन्थ "वेदांग ज्योतिष" की रचना की थी। वैदिक गणित आज भी बड़ी संख्याओं के सटीक गुणा–भाग के लिये जानी जाती है। मध्ययुगीन भारतीय गणितज्ञों जैसे ब्रहमगुप्त (सातवीं शताब्दी), महावीर (नवीं शताब्दी) भाष्कर (बारहवी शताब्दी) ने कुछ ऐसे मौलिक आविष्कार किये जिनसे आज का विकसित यूरोप महाद्वीप भी अपरिचित था। अंकगणित में वैदिक ऋषि मेघतिथि 1012 तक की बड़ी संख्याओं से परिचित थे। यजुर्वेद संहिता अध्याय 17, मंत्र में दस खरब तक की संख्या का उल्लेख है। ज्यामिति का ज्ञान भी हड़प्पा कालीन संस्कृति के अवशेषों में दृष्टिगोचर होता है। जिसमें

मुख्यतः भवन व सड़क निर्माण की शैली प्रमुख है। त्रिकोणमिति का जो मौलिक ज्ञान छठी शताब्दी में वराहमिहिर कृत 'सूर्य सिद्धांत' में प्रमाणिक है। उसका ज्ञान यूरोप के ब्रिग्स द्वारा सोलहवीं शताब्दी में मिला।

बीज गणित के क्षेत्र में सबसे बड़ी उपलब्धि "अनिवार्य वर्ग समीकरण का हल" का श्रेय जान पाल को 1688 ई. को दिया जाता है। जबकि इस समीकरण का हल 1000 वर्ष पूर्व ब्रहमगुप्त ने प्रस्तुत कर दिया था। वैदिक चिकित्सा की बडी अनुकरणीय पद्धति हमारे पूर्वजो के पास थी इसीलिये चिकित्सक को आज भी भगवान का दर्जा प्राप्त है। अथर्ववेद मे बीमारियों व उपयोग मे लाई जाने वाली वनस्पतियों का वर्णन सूत्रो के रूप में मिलता है यहाँ तक कि आज कल की आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों जैसे जलचिकित्सा, सूर्य चिकित्सा व मानसिक रोगों के निदान का भी वर्णन मिलता है। अथर्ववेद के पश्चात ईसा से लगभग 600 वर्ष पूर्व शरीर चिकित्सा पर प्रमाणिक व विश्वविख्यात ग्रन्थों 'चरक सहिता' व शल्य चिकित्सा पर 'सुश्रुत संहिता' का निर्माण महर्षि चरक एवं सुश्रुत द्वारा किया गया था। चरक संहिता को वर्तमान आयुर्वेद पद्धति का आधार माना जाता है इसको जीवन का शास्त्र भी कहते हैं जबकि सुश्रुत को विश्व में प्लास्टिक सर्जरी का जनक कहा जाता है। पशु – चिकित्सा विज्ञान भी वैदिक काल में काफी विकसित था। उस समय में उपयोग में लाने जाने वाले जानवरों जैसे घोडे, हाथियों, गाय, बैल आदि की चिकित्सा से संबधित कई ग्रन्थों जैसे हय आयुर्वेद, 'अश्व लक्षण शास्त्र' व 'अश्व प्रशंसा' आदि का लेखन शालिहोत्र नामक पशु चिकित्सक द्वारा कर दिया गया था। भौतिक विज्ञान के क्षेत्र मे भारतवर्ष विश्व के अन्य देशो से अग्रणी था। कणाद ऋषि ने छठी शताब्दी में ही परमाणु संरचना, प्रवृत्ति व प्रकारो की परिकल्पना को साकार कर दिया था। रसायन विज्ञान का इतिहास भी सर्वोपरि रहा है जिसकी गवाही मध्यकाल में संस्कृत में लिखित रसायन विज्ञान के 44 ग्रन्थ आज भी दे रहें हैं। नागार्जुन द्वारा दसवीं शताब्दी लिखित 'रस रत्नाकर' नामक ग्रन्थ में पारे के योगिक बनाने व चांदी, सोना, दिन व तांबे के अयस्क भूगर्भ से निकालने व उनको परिष्कृत करने को विधियों का वर्णन है। धातु विज्ञान भारत मे हड़प्पा कालीन संस्कृति (3000 बी. सी) से ही विकसित रहा है। इस पूर्व 326 ई. मे पोरस ने 30 पौंड वजन का भारतीय इस्पात सिंकदर को भेंट किया था। दिल्ली में स्थित ऐतिहासिक कुतुबमीनार के निकट खड़ा लौहस्तम्भ (चौथी शताब्दी) 1700 वर्षो की धूप व वर्षा सहने के पश्चात आज भी जंगविहीन बना हुआ है जो कि भारतीय धातुकर्म का उत्कृष्ट नमूना है। रत्न विज्ञान भी वैदिक काल में उच्चकोटि का था जिसमे अधिकाँश रत्नो जैसे हीरा, मुक्ता, स्फटिक, पुखराज, शंख, गोमेद व प्रबल का पूर्ण ज्ञान तत्कालीन नागरिको को था, इन सभी रत्नो का उपयोग आभूषणो या अन्य आवश्यकताओं के लिये किया जाता था। यहाँ तक कि सबसे कठोरतम रत्न हीरा काटने के उपकरण भी उस समय विद्यमान थे। उपरोक्त वैज्ञानिक पराकष्ठाओं के साथ साथ जलपान निर्माण मे भी मध्यकाल तक भारतीय यूरोप के लोगों से आगे थे। विश्व सिरमोर व मजबूत आर्थिक तंत्र के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि एक समय सोने की चिड़िया कहलाने वाले देश भारत पर किसी की नजर लग गई और वो नजर थी विदेशी आक्रमण कारियों मुगल शासकों व अंग्रेजो की। इन अनवरत आक्रमणों व लूट खसोट की गति विधियों ने भारत को दसवीं शताब्दी के बाद पनपने का मौका नहीं दिया। मुगलो व अग्रेजों द्वारा सांस्कृतिक विरासत को मिटाने व बदलने के भी प्रयास किये गये जिससे चारो तरफ अराजकता अव्यवस्था व बेचारगी फैल गई और स्वतंत्रा के पश्चात हम सभी, विशेषकर युवा पीढ़ी वास्तव मे अंग्रेजी जीवन शैली से प्रभावित होकर अपनी भारतीय परम्पराओं को भूल बैठे है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पाश्चात्य संस्कृति व जीवनशैली के शरीर, समाज व देश पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों से शीध्र ही हम सभी अवगत हो जायेंगे एंव अपनी मेहनत इमानदारी व सत्यनिष्ठा के बल पर अपनी विज्ञान सम्मत गौरवशाली परम्पराओं को आधुनिक विज्ञान व तकनीकी के साथ अपना कर भारत को सामाजिक – आर्थिक रूप से समृद्ध बनायेंगे। फलस्वरूप भारत पुनः विश्वगुरू का खोया हुआ खिताब हासिल कर लेगा।

असम की पौराणिक गाथाऐं

गीता बसुमतारी
बी. 602, अपार्टमेंट, विजय काम्पलैक्स सर्वे, गोहाटी

भारत के उत्तर पूर्वी सीमा पर बसा हुआ है असम। प्रकृति की गोद में बसा असम अपनी प्राकृतिक शोभा, संस्कृति, नाना भाषा, धर्म तथा वेश–भूषा के लिये प्रसिद्ध है। इसका इतिहास भी अति प्राचीन है। असम का प्राचीन नाम है 'प्राग् ज्योतिष', यह नाम कैसे पड़ा, इसमें भी मतभेद है। "कालिका पुराण" मे कहा गया है कि ब्रहमा ने सबसे पहले यही स्थिति लेकर सारे ज्योतिष मण्डल की सृष्टि की थी। इसलिये इस स्थान का नाम पड़ा "प्रागज्योतिष"। कहीं कहीं इसका अर्थ भिन्न भी पाया जाता है। जैसे कि– प्राग्ज्योतिष शब्द कुछ अनार्य शब्दों का मिश्रण भी बताया जाता है। जिसका अर्थ होता है – लम्बी, ऊँची पर्वत मालायें।

पागार=पर्वत; ज्यो या जुह = ऊँचा; तिक् या विछ = लम्बे।

यानि कि–लम्बी, ऊँची पर्वत मालायें जहाँ हो–वह प्राग्ज्योतिष।

रामायण, महाभारत आदि महाकाव्य और महापुराण ग्रन्थों में इसी नाम का उल्लेख है। अनुमानतः प्राग्ज्योतिष का आर्य सभ्यता से सम्बन्ध नहीं था। महाभारत में इसे म्लेशों का देश कहा गया है। और भगदन्त यहाँ के राजा थे। महाभारत में कहीं पर इसे असुर राज्य भी कहा गया है, जिसके राजा थे नरक। कालीदास के रघुवंश में "प्राग्ज्योतिष" और "कामरूप" एक ही राज्य के दो अलग अलग नाम बताये गये है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि प्राचीन प्राग्ज्योतिष किसी मंगोल जाति द्वारा स्थापित किया गया था। इसकी उत्पत्ति के बारे में कोई ठोस ऐतिहासिक प्रमाण तो है नहीं पर रामायण – महाभारत के दिनों से ही यह प्राग्ज्योतिष बहुत महत्वपूर्ण स्थान रहा है, जिसका उल्लेख हर महत्वपूर्ण प्राचीन घटनाओं में मिलता है।

सुग्रीव ने सीता की खोज में चारों ओर वानर दूत भेजे थे। यहीं पर प्राग्ज्योतिष की मनोरम घाटियों तथा विशाल गुफाओं का जिक्र मिलता है।

महाभारत की तीन बड़ी घटनाओं में, जैसे राजसूय यज्ञ के लिये अर्जुन का दिग्विजय, कुरूक्षेत्र युद्ध और पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ के सन्दर्भ में प्राग्ज्योतिष का वर्णन आता है।

कालीदास के रघुवंश में भी प्राग्ज्योतिष का विस्तृत वर्णन पाया जाता है। "हयुयेनसांग" का भ्रमण सर्व भारतीय घटना है। वे कामरूप भी आये थे।

हर्षवर्धन के साम्राज्य काल में कामरूपेश्वर भास्कर वर्मा का भी काफी उँचा स्थान था। इस प्रकार हम पाते हैं कि असम का इतिहास अति प्राचीन है तथा यह अनेक पौराणिक गाथाओं से भरा है। प्रस्तुत है इन्हीं में से कुछ एक प्राचीन कथायें।

वराह रूपी विष्णु और पृथ्वी की सन्तान नरक को मिथिला के राजा जनक ने पाल पोस कर बड़ा किया था। बड़े होकर वे बड़े ही विद्वान, रूपवान, बलवान तथा नाना गुणों के अधिकारी बनें। विष्णु ने उन्हें वर दिया था कि 16 (सोलह) वर्ष की आयु में वे राज्य के अधिकारी बनेंगे। इधर प्राग्ज्योतिष को शिव ने अपनी लीला भूमि चुनी थी। यहीं कामाख्या देवी विराजित थी। उस समय यहाँ किरात जाति के लोग वास करते थे, और उनके राजा थे घटक। बाद में मिथिला से आकर घटक को युद्ध में परास्त कर नरक यहाँ के राजा बनें। बाद में नरक के राज्य का नाम पड़ा "कामरूप"। "कामरूप" यह नाम कैसे पड़ा, इसकी भी एक अलग कहानी है।

कहा जाता है कि एक बार जब शिव ध्यान वस्था में मग्न थे, कामदेवता और रति ने उनका ध्यान तोड़ा था। फलस्वरूप शिव की तृतीय आँख खुली और कामदेव जल कर भस्म हो गये। परन्तु रति की आकुल प्रार्थना से दूषित हो कर शिव ने पुनः काम को जीवन दान दिया और इसी से इस जगह का नाम पड़ा "कामरूप"।

इसी कामरूप के राजा थे नरक। देव, मुनि और ब्राहमण आदि का बड़ा मान करते थे। कामाख्या देवी को भी पूजते थे। राज्य में चारों ओर बड़ी उन्नति हो रही थी। उन्हीं दिनों शोनितपुर में यानि वर्तमान तेजपुर शहर में "बान" नामक एक असुर राजा राज करते थे। स्वभाव के बड़े अत्याचारी, पर थे शिवभक्त। नरक की बान से बड़ी घनिष्ट मित्रता हो गयी और बान के प्रभाव से नरक भी देव से असुर प्रवृति का हो गया। पहले की भाँति ब्राहमण आदि का सम्मान करना उन्होंने छोड दिया और यहाँ तक कि कामख्या के प्रति भी भक्ति नहीं रही।

आगे कहानी इस प्रकार है कि इन्हीं दिनों ब्रहमा के पुत्र वशिष्ठ मुनि, कामाख्या दर्शन की अभिलाषा से प्राग्ज्योतिष पधारे। नरक ने वशिष्ठ मुनि को कामख्या दर्शन की अनुमति नही दी और डांट फटकार कर भेज दिया।

इस पर क्रोधित मुनि ने श्राप दिया – "तू जिसका पुत्र है, वही मनुष्य रूप धारण कर तेरा वध करेगा। तेरी मृत्यु के पश्चात् ही मैं कामाख्या के दर्शन करूंगा। तब तक कामाख्या भी अर्न्तध्यान हो जायेगी'', और यही से शुरू होती है वशिष्ठाश्रम की उत्पत्ति की कहानी।

वशिष्ठाश्रम वर्तमान गुवाहाटी शहर से लगभग सात मील दक्षिण की ओर सन्ध्याचल पर्वत पर है। यह पवित्र स्थान आज भी लाखों हिन्दुओं को आकर्षित करता है। "कालिका – पुराण" में पाया जाता है कि वशिष्ठ मुनि राजा निमी के श्राप से देहहीन हुये थे। और निमी भी वशिष्ठ के श्राप से देहहीन हुये थे। तब वशिष्ठ ने सन्ध्याचल पर्वत पर विष्णु की तपस्या की। भगवान विष्णु सन्तुष्ट हुये और कान्ता नामक तीन जल धाराओं को प्रवाहित कर गंगा को यहाँ खींच लाये। यह त्रिधाराओं का संगम स्थल वशिष्ठ गंगा के नाम से जाना जाता है। इसी पवित्र संगम स्थल पर स्नान करके तथा पवित्र जल का पान करने से वशिष्ठ श्राप मुक्त हुये थे और उन्हें अपना पूर्व रूप प्राप्त हुआ। आज भी इसी स्थान पर कल कल बहती ये तीन धाराएं वशिष्ठ मुनि की याद दिलाती है। यहीं पर वशिष्ठ मुनि का एक मंदिर है। इसका निर्माण सन् 1751 और 1769 के बीच आहोम राजा राजेश्वर सिंह के काल में हुआ था। मंदिर के भीतर वशिष्ठ मुनि के पद चिन्ह हैं। तीन धाराओं के पवित्र संगम स्थल पर स्नान करने आज भी हजारों हिन्दू तीर्थ यात्रियों की भीड लगी रहती है।

वशिष्ठ मुनि के श्राप से कामाख्या देवी अर्न्तध्यान हो गयी। नीलकूट पर्वत शुन्य हो गया। चारों ओर तबाही होने लगी। जिससे नरक भयभीत तो अवश्य हुआ पर असुरों का सा उसका स्वभाव परिवर्तित नहीं हुआ। नरक, जो बाद में नरकासुर के नाम से प्रसिद्ध हुये, बडे अत्याचारी होते चले। देवी–देवताओं पर भी विजय पानी शुरू कर दी। बाद में नरकासुर के ही पिता भगवान विष्णु के मनुष्य रूपी अवतार श्री कृष्ण ने उनका वध किया।

नरकासुर के साथ शोनितपुर और बान का जब उल्लेख हुआ ही है, तब क्यों न ऊषा – अनिरूद्ध की प्रेम कहानी को दोहरायें। वर्तमान तेजपुर शहर ही प्राचीन समय में शोनितपुर कहलाता था। "कलिका पुराण" के अनुसार जब नरकासुर प्राग्ज्योतिष के राजा थे, तब बान शोनितपुर में राज करते थे। ऊषा उनकी ही कन्या थी। एक बार ऊषा ने स्वप्न में एक सुन्दर युवक को देखा और उसे ही अपना जीवन साथी मान बैठी। ऊषा ने यह बात अपनी सखी चित्रलेखा से कहीं और स्वप्न के उस युवक के प्रति अपने मनोभाव प्रकट किये। चित्रलेखा एक से एक सुन्दर युवकों की तस्वीरें बना बना कर ऊषा को दिखाने लगी। आखिर कार एक तस्वीर को वह पहचान गयी जो उसका दिल चुराने स्वप्न में आये थे। ये तस्वीर थी श्री कृष्ण के पोते अनिरूद्ध की। ऊषा और अनिरूद्ध का गुप्त मिलन और प्रेम अधिक दिनों तक छिपा नहीं रहा। जब इसकी खबर बान को हुयी तो उन्होंने अनिरूद्ध को युद्ध के लिये ललकारा। युद्ध शुरू हुआ। एक तरफ अनिरूद्ध की सहायता को कृष्ण पहुँचे और दूसरी ओर शिव पहुँचे अपने भक्त बान की मदद करने। यहीं हर (शिव) और हरि (कृष्ण) के बीच युद्ध हुआ था। वर्तमान तेजपुर का "अग्नि गढ़" आज भी ऊषा – अनिरूद्ध की कहानी की याद दिलाता है।

गुवाहाटी शहर के भीतर और बाहर चारों और कई मठ–मंदिर हैं। यदि गुवाहाटी शहर से पश्चिम दिशा की और नजर दौड़ायें, तो ऊँचा नीलाचल पर्वत दिखाई पड़ता है। यहीं पर हिन्दुओं का तीर्थ स्थान कामाख्या देवी का मंदिर है। जैसा कि हिन्दुओं का विश्वास है, कामाख्या मंदिर के भीतर योनि पीठ विद्यमान है चुकि इसी स्थान पर सती का मुख्य अंग योनि गिरा था, इसे पीठ श्रेष्ठ कहा जाता है। वर्तमान नीलाचल पर्वत पर जो कामाख्या मंदिर है, उसका सन् 1565 में कोच राजा नरनारायण ने पुर्ननिर्माण करवाया था।

इस मंदिर की सृष्टि के बारे में "कालिका पुराण" में इस प्रकार लिखा है। – यह बात उस समय की है, जब सती ने शिव को अपना वर चुना और अपने पिता दक्ष की ईच्छा के विपरीत शिव से शादी कर ली थी।

एक बार सती के पिता दक्ष ने अपने यहाँ यज्ञ के अवसर पर जटा धारी, सर्प की माला पहने, भस्म लगाये और बाघ की छाल से तन ढ़ंकने वाले शिव को अपेक्षाकृत निमंत्रण नही भेजा। सती जीते जी अपने पति का यह अपमान सहन नहीं कर सकी और उसने अपने प्राण त्याग दिये। ससुर द्वारा किये अपमान और फिर प्रिय पत्नी का वियोग – भला शिव कब तक शांत बैठे रहते? शिव ने भयंकर रूप धारण किया और क्षण भर मे दक्ष के यज्ञ को नाश कर डाला। फिर सती की लाश को कंधे पर लिये चल पड़े पूर्व दिशा की ओर। चारों ओर सर्वनाश ही सर्वनाश नजर आने लगा। स्वर्ग में भी

तहलका मच गया। अब क्या होगा? न जाने भोले शिव क्या कर बैठे तभी ब्रहमा, विष्णु और शनि ने सती के देह मे प्रवेश कर अंग प्रत्यंग को जगह जगह से काट गिराया। जहाँ जहाँ से अंग गिरे, वहाँ वहाँ तीर्थ स्थान बन गये। कामरूप के इसी स्थान पर सती का योनि मंडल गिरा था। यही सारे तीर्थो के भीतर श्रेष्ठ कहलाया।

कामाख्या मंदिर के भीतर कोच राजा नर नारायण की एक शिला लिपि तथा नर नारायण और चिलाराय की पत्थर की बनी मूर्तियाँ है। यहाँ प्रति वर्ष भारत के कोने कोने से यात्री कामाख्या देवी के दर्शन को आते हैं।

नीलांचल पहाड़ के नीचे से ऊपर मंदिर तक जाने के लिये एक प्राचीन पत्थर की बनी सीढ़ी–दार सड़क है। यह सडक किसने और कैसे बनवाई, इसकी भी एक कहानी है।

पौराणिक गाथाओं को युग युग से लौकिक कल्पनाओं ने नाना रंगों से रंगा है। किसी एक समय नरकासुर बड़ा ही अत्याचारी हो गया था। उसने माँ कामाख्या के प्रति भक्ति तक छोड़ दी थी। और यहाँ तक कि कामाख्या देवी से व्याह रचाना चाहा था। इस पर कामाख्या ने नरक से कहा था कि यदि वह रातों रात पहाडी के नीचे से मंदिर तक सीढ़ी नुमा रास्ता निर्माण कर सके तो वो उसकी पत्नी बनेगी, शर्त यह थी कि सुबह होने से पहले यह काम पूरा हो जाना चाहिए। नरक को यह शर्त मंजूर हुयी और उसने विश्वकर्मा की सहायता से काम शुरू कर दिया। सुबह होने से पहले निर्माण कार्य समाप्त होते देख कामाख्या देवी भय से काँप उठी। वह शर्त हारना नहीं चाहती थी

उसने सुबह होने से पहले ही मूर्गों को बाँग देने की आज्ञा दी। मूर्गे की बाँग प्रातः होने की सूचना थी। नरकासुर गुस्से से आग बबुला हो उठा। कहा जाता है कि उसने मूर्गे का पीछा करके उसे काट डाला।यह जगह वर्तमान "कुकुरा–कटा–गढ़" (कुकुरा = मूर्गा) कहलाता है। इस प्रकार नरकासुर की मनोकामना पूरी न हो सकी और देवी कामाख्या असुर की पत्नी होने से बची। तो, आज की यह पत्थर की बनी सड़क उसी नरकासुर की बनाई कहलाती है।

यदि हम असम की पूर्वी सीमा की ओर बढ़ते चले, तो एक और पौराणिक गाथा याद आती है। असम और ब्रह्मपुत्र का सम्बन्ध सदियों पुराना है। सदियों से महाबाहु ब्रह्मपुत्र असम के सीने को सींचता आया है। उत्तर पूर्वी सीमान्त क्षेत्र का मिसिमी पर्वत लखिमपुर जिला के उत्तर पूर्वी सीमा पर है। इसी स्थान से ब्रह्मपुत्र नदी पर्वत से नीचे उतरती हुयी, घाटियों के बीच से गुजरती हुई सारे असम में फैल जाती है। ठीक इसी स्थान पर हिन्दुओं का तीर्थ स्थल पुराण–प्रसिद्ध ब्रह्मकुण्ड और परशुराम कुण्ड है। ये ब्रह्मकुण्ड उस आर्य ऋषि की याद दिलाता है, जिन्होने असम के उत्तर पूर्वी कोने के पर्वत पर प्राचीन समय में आश्रम स्थापित कर वास किया था। शान्तनु ऋषि की पत्नी अमोघा ने अपनी कोख से ब्रह्मा के पुत्र को जन्म दिया था। इसी का नाम ब्रह्मपुत्र पड़ा, जो उसी पर्वत पर एक कुण्ड बनाकर पानी में समाये हुये थे। यही हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ स्थान ब्रह्मकुण्ड कहलाता है। वर्तमान "सदिया" से करीब 58 मील उत्तर पूर्व में परशुराम कुंड है। इसकी भी एक कहानी है।

हिन्दुओं के छठे अवतार परशुराम के सिर पर मातृ हत्या का पाप चढ़ा। फलस्वरूप उनकी कुल्हाड़ी उनके ही हाथ से चिपक गयी। इससे मुक्ति पाने के लिये वे तीर्थ भ्रमण करते हुए इसी जगह आ पहुँचे। ब्रह्मकुण्ड के पाट को काट कर उन्होंने पानी को बहा डाला और उसमें स्नान किया जिससे उनके हाथ से कुल्हाड़ी छूट पड़ी। जिस कुण्ड में स्नान करने से परशुराम के सिर से मातृ हत्या का पाप उतरा, वही कुण्ड पवित्र "परशुराम कुण्ड" कहलाया।

कहा जाता है कि इस कुण्ड में जब परशुराम स्नान कर रहे थे, ब्रह्मपुत्र चुपके से उनकी कुल्हाड़ी उठा ले गये। क्रोधित परशुराम ने ब्रह्मपुत्र को मल–मूत्र वाहिनी होने का श्राप दिया। इस पर ब्रह्मपुत्र ने अपना रूप धारण किया और क्षमा याचना की। परशुराम ने ब्रह्मपुत्र को आर्शीवाद दिया कि – ब्रह्मपुत्र में वसंत काल के अशोकाष्टमी के दिन गंगा आ कर समायेगी और उस दिन जो कोई ब्रह्मपुत्र में स्नान करेगा, उसे सारे पापों से मुक्ति मिलेगी। उसी दिन से अशोकाष्टमी के दिन ब्रह्मपुत्र में स्नान करने की प्रथा चली है।

पर्वत–पर्वत, घाटि–घाटि कभी उछल–कूद तो कभी धीरे बहता हुआ ये महा–बाहु ब्रह्मपुत्र सदियों से असम के गौरव गान गाये जा रहा है और सदियों तक गाते रहेगा।

विडूडभ

अभिषेक कुमार मिश्र
यशवंत नगर, हजारीबाग, झारखंड

बौद्ध भिक्षु तीव्रता से ध्यान स्थल की ओर जा रहा था, जहाँ तथागत बुद्ध के प्रिय शिष्य विहग साधना में रत थे। वह शीघ्रताशीघ्र उन्हें वो सूचना देना चाह रहा था जिसने उसे काफी उद्विग्न कर रखा था। मुनि विहग के सामने आ उसने उन्हें विधिपूर्वक नमन और वंदना करते हुये सूचित किया– "आचार्य, शाक्यों का समूल नाश कर कपिलवस्तू से लौटते हुये विडूडभ की सेना अचिरवती नदी के तट पर शिविर लगा विश्राम कर रही थी, जबकि रात एक अप्रत्याशित और विनाशकारी बाढ़ में राजा सहित सभी मृत्यु को प्राप्त हो गए।"

आचार्य विहग शांतचित्त थे। उनके मानस में विडूडभ की जीवन यात्रा घूम रही थी। एक ऐसा पात्र जिसे उसके पिता कोशल नरेश प्रसेनजित द्वारा उनके राज्य और तथागत के बौद्ध भिक्षुसंघ के मध्य सुदृढ़ संबंधों का वाहक बनना था, परन्तु मिथ्या जातिभिमान और भेदभाव से पीड़ित हो अपने ही क्रोध और प्रतिशोध की अग्नि में न सिर्फ कपिलवस्तू और शाक्यों को भस्म कर गया अपितु स्वयं भी नष्ट हो गया। इतिहास उसके प्रति सहानुभूति रखेगा या मात्र एक खलनायक के ही रूप में देखेगा यह भविष्य के गर्भ में है, किन्तु यह सत्य है कि उसके साथ अन्याय हुआ था; और वह भी उस जातिगत आधार पर जिसपर उसका कोई नियंत्रण नहीं था। फिर भी.................

भिक्षुओं ने उनसे अपनी विचार श्रृंखला को उनसे भी साझा करने का आग्रह किया, जिसे स्वीकार करते हुये उन्होंने अपने शिष्यों को विडूडभ के बारे में बताना प्रारंभ किया–

कोशल नरेश प्रसेनजित के यहाँ जन्मे विडूडभ को बचपन से ही अपने मित्रों से उनके ननिहाल की बाते सुन, वहाँ से मिले उपहारों आदि को देख स्वयं भी अपने ननिहाल जाने की इच्छा होती थी; किन्तु उसकी माँ उसे किसी–न–किसी बहाने बहला कर रोक ही लिया करती थी। मगर जब वो सोलह वर्ष का हुआ तो उसने दृढ़ निश्चय कर लिया कि इस बार अपनी ननिहाल अवश्य जाएगा। उसकी माता भी इस बार इनकार न कर सकी, किन्तु बिना उसे बताए उसके निकलने के पूर्व एक दूत को गुप्त रूप से भेज वहाँ आवश्यक तैयारियों के लिए सूचना जरूर भिजवा दी। इसका खुलासा कभी होता भी नहीं यदि दुर्घटनावश वह कटु अनुभव विडूडभ को न मिला होता। कपिलवस्तू में उसके स्वागत की काफी तैयारियाँ की गई थीं। उसने अपने पितामाह, मातुल, अन्य स्त्रियों और अंग्रेजों से विधिपूर्वक भेंट की और उनका यथोचित नमन–वंदन किया, किन्तु आश्चर्यजनक रूप से वहाँ उससे छोटा कोई न मिला जो उसे नमन करे। आखिरकार उससे रहा न गया और उसने यह पूछ ही लिया– प्रत्युत्तर में उसे बताया गया कि उनसे छोटे सभी राजकुमार बाहर गए हुये हैं। इसके अलावा उसके सत्कार में कोई कमी न देखी गई। कुछ दिन वह अपनी ननिहाल के आतिथ्य में रहा और फिर वापस लौटने की इच्छा प्रकट की। प्रेमपूर्वक सभी से विदा ले वह अपने सेवकों समेत वापस लौट पड़ा। मार्ग में लौटते उसके एक सैनिक को अपनी कोई सामग्री महल में भूल आने की याद आई और वो अनुमति ले वापस लौटा। वापस आते ही वह यह देख अचंभित रह गया कि जिस आसन पर विडूडभ बैठा था उसे दूध और जल से धुलवाया जा रहा है। सेवक मुख्य दासी से इसका कारण पूछ रहा था, जिसके उत्तर में उसने कहा कि इस आसन पर वासभ खत्तिया दासी का पुत्र बैठा था, इसलिए यह अशुद्ध हो गया है। यह तो अच्छा हुआ कि उसकी माँ ने यहाँ उसके आने की सूचना भिजवा दी थी, जिस कारण छोटे राजकुमारों को राजा ने पहले ही बाहर भेज दिया, जिससे कि उन्हे उस दासी पुत्र को नमन कर अपमानित न होना पड़े। यदि ऐसा होता तो यह अपनी उच्च जाति के अभिमान से समझौता करना होता, और वो यदि ऐसा न करते तो शक्तिशाली कोशल राज के कोपभाजन बनते..........

सैनिक से यह जानकारी पा विडूडभ को क्रोधित होना ही था। आत्मग्लानि और क्रोध में उसने शाक्यों से प्रतिशोध लेने और उसके बैठने के कारण जिस आसन को दूध से धोया गया, उसे शाक्यों के कटे मस्तकों के रक्त से धोने का प्रण भी उसने ले लिया। किन्तु नियति को तो उसे और भी कडवाहट देनी थी। पिता प्रसेनजीत को उसने शाक्यों के

इस छल की जानकारी दी तो क्रोधित वो भी हुये। शाक्य कन्या से विवाह का उनका उदेश्य ही यही था कि वो बौद्ध भिक्षुगणों का विश्वास जीत सकें। शाक्य कुल से जुड वो बौद्ध भिक्षुओं से और आत्मीयता बढ़ा सकें। उच्च कुलीन क्षत्रिय शाक्य अपने जातिगत अभिमान में उन्हे अपनी पुत्री तो देने को तत्पर न हुये किन्तु उनके संभावित क्रोध से बचने के लिए रूप–गुण में उत्तम किन्तु नागमुंडा नामक दासी की पुत्री को अपनी पुत्री जताते हुये छलपूर्वक उसका विवाह राजा प्रसेनजीत से करवा दिया। इतने वर्षो से अपने भरोसे को छले जाने का दुःख और क्षोभ राजा को भी कम न था। इस क्रोध की प्रतिक्रिया निकली विडूडभ और उसकी माँ को राजकीय सम्मान से वंचित कर। दोनों को अब मात्र एक सामान्य दास–दासी सा जीवन व्यतीत करने की आज्ञा दे दी गई। पिता के इस व्यवहार ने विडूडभ के अंदर प्रतिशोध की भावना और तीव्र करने के साथ ही उनके प्रति भी कटुता भर दी।

उन्ही दिनों भगवान बुद्ध राजमहल पधारे। बातों के क्रम में प्रसेनजीत ने उनसे शाक्यों के छल और पुत्र के अपमान की घटना का उल्लेख किया। बुद्ध ने कहा– राजन, शाक्यों ने यह उचित नहीं किया है। किन्तु आप भी विडूडभ और उसकी माँ के साथ उचित नहीं कर रहे हैं। वह अब आपकी पत्नी हैं और विडूडभ आपका पुत्र। अब वे आपके कुल के हैं, पिता का गोत्र ही उनकी पहचान है......." विभिन्न तथ्यों और बोधि कथाओं से बुद्ध प्रसेनजीत को समझाने और उसके क्रोध को शांत करने में सफल हुये जिससे संतुष्ट हो प्रसेनजीत ने पुनः वाशभ खत्तिया और विडूडभ को अपना लिया।

किन्तु विडूडभ अपने अपमान और प्रतिशोध के संकल्प को भूला नहीं था और मात्र उचित समय की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे वह अवसर मिला जब परिस्थितयाँ राजा प्रसेनजीत के विपरीत हुईं और वो छलपूर्वक मृत्यु को प्राप्त हुये। जिसके पश्चात विडूडभ राजा के पद पर आसीन हुआ। उसे अपने प्रतिशोध के लिए इसी अवसर की प्रतीक्षा थी। उसने एक विशाल सेना एकत्र की और कपिलवस्तू की ओर प्रस्थान किया। जब बुद्ध को यह ज्ञात हुआ कि विडूडभ शाक्यों के संहार हेतु कपिलवस्तू जा रहा है तो नगर के बाहर एक पत्रहीन वृक्ष के नीचे आसन लगा बैठ गए। वहाँ से गुजरता विडूडभ उनके शांत मुख पर धूप–छाँव का खेल देख स्तब्ध और सम्मोहित सा हो गया। बुद्ध के उसके और उसकी माँ के प्रति उपकार को भी वह भुला नहीं था, अतः उनके लिए उसके हृदय में असीम सम्मान भी था। वह नियमपूर्वक अस्त्रहीन हो बुद्ध के समक्ष श्रद्धाभाव से गया और विनम्रता से उनसे अनुरोध किया कि– "प्रभु, आप इस पत्रहीन वृक्ष के नीचे धूप में क्यों विराजित हैं! चलें मेरे राज्य में विशाल वृक्ष के नीचे आसीन हों।" बुद्ध ने उसकी आँखों में शांतचित्त से देखते हुये उत्तर दिया– "राजन! अपनों की छाया शीतल होती है।" बुद्ध के उत्तर से विडूडभ उनका आशय समझ गया कि तथागत स्वयं शाक्यों की रक्षा के उदेश्य से वहाँ आए हैं। आगे बढ़ना उचित न समझ वह वापस लौट गया।

परंतु अपना निश्चय उसने बदला नहीं था। दो और बार उसने पुनः कपिलवस्तू पर आक्रमण का प्रयास किया किन्तु मार्ग में बुद्ध को देख प्रस्थान स्थगित कर दिया। जब चौथी बार पुनः वह युद्ध के उद्देश्य से निकला तो शाक्यों के पूर्व कर्म, जातिभिमान, भेदभाव, अस्पृश्यता के व्यवहार से मानवीय सम्मान और स्वाभिमान को ठेस पहुँचाने के उनके कर्मो के फल के रूप में इस बार भगवान बुद्ध विडूडभ के प्रस्थान के क्रम में उसके मार्ग पर नहीं आए।

विडूड इस बार निर्विरोध कपिलवस्तू पहुँच गया जहाँ उसने शाक्यों का भीषण नरसंहार किया। नवजात बच्चों से लेकर बड़े–बूढे तक किसी को नहीं छोडा गया। अपने प्रण के अनुसार उसने शाक्यों के कटे मस्तकों से प्रवाहित रक्त से उस आसन को धुलवाया, जिसे उसके बैठने के कारण अशुद्ध मान धुलवाया गया था।

क्रोध और प्रतिशोध की अग्नि में जीवन भर जलते रहने वाले विडूडभ की आत्मा को संभवतः नदी की शीतलता में शांति मिल गई हो।

विडूडभ की कथा सुन रहे शिष्य इसके विभिन्न पक्षों पर विचार करने लगे। वो समझ रहे थे कि जातिवादी व्यवहार अनुचित तो है ही, किन्तु क्रोध और प्रतिशोध के अधीन अत्याचार का परिणाम भी प्रतिकूल ही होता है। अपने कर्मों के अनुसार फल सभी को प्राप्त करना ही होता है.........

मेले– हमारी सामाजिक एकता के प्रतीक

रघुवीर सिंह नेगी
वा.हि.भू.सं., देहरादून

भारत वर्ष गावों कस्बों व शहरों का देश है जिसमें हमारी समाजिक एवं सांस्कृतिक रीति रिवाजों से जुड़ी अनेक कड़ियां है। इन्हीं में से एक कड़ी का नाम है मेला, मेले का शाब्दिक अर्थ है मिलन, यह एक ऐसा पर्व है जो साल के वारह महीनो में एक दिन तय होता है इस दिन लोग एक विशेष जगह, खुले मैदान या तीर्थ स्थान मे एक जुट होते है तथा देश विदेश के व्यापारी अपनी विशेष संस्कृतियों से जुड़े सामान की सस्ते व सही दामों पर यहां आकर क्रय विक्रय करते है तथा लोग दूर दूर से आकर यहां अपने रिश्तेदारों, सगे संबन्धियों से मुलाकातें करते है तथा अपनी अपनी पस्न्द की वस्तुओं की खरीददारी करते है।

मेले की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें बच्चों बडों व बूढ़ो सभी के लिए मनोरंजन के अनेक साधन लगाये जाते है खाने पीने की विभिन्न वस्तुयें तथा जीविकोपार्जन की सभी वस्तुयें मेले मे देखने को मिलती है। यहां तक कि शादी के जोड़े भी मेले मे ही तय किये जाते है जानवरों की खरीददारी तथा अन्य वस्तुयें मेले के आकर्षण का केन्द्र होते है।

यदि हम मेले को आधुनिक भारत से जोड़ते है तो मात्र हमारे देश मे विभिन्न शहरों मे विज्ञान प्रदर्शनी हस्तकला प्रदर्शनी खेल, सेमिनार तकनीकी वस्तुओं का क्रय विक्रय अनुसंधान एवं शोध के क्षेत्र मे युवा वर्ग को जागरूक करने के लिए विभिन्न संस्थानों मे मेले का आयोजन किया जाता है। इनसे हमें आधुनिक कार्य शैली व शोध अनुसन्घानात्मक कार्य प्रणाली का विशेष ज्ञान प्राप्त होता है।

मेले का विशेष महत्व इसलिए भी है कि इसमे विभिन्न जाति धर्म के लोग एक जुट होकर भाग लेते है जो हमारी राष्ट्रीय एकता व अखण्डता को दर्शाता है लोग इसमे अपने सुख दुख स्वार्थ हिसां को भुलाकर बढ़ चढ़ कर भाग लेते है जिसका उदाहरण यह है कि हम अनेक होते हुए भी विश्व पटल पर एक लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में विख्यात है। मेला एक ऐसा शब्द है जहां पर विभिन्न बोली भाषाओं जाति धर्मो, संस्कृतियों के लोग एक जुट होकर अपना मनोरंजन करते है।

हमारे उत्तर भारत मे प्रमुख मेले आज भी विश्व विख्यात है जिसमें से हिमाचल में कुल्लू दशहरे का मेला, पंजाब में बैशाखी मेला हरियाणा मे पिहोवा तीर्थ एवं सूरज कुण्ड का मेला राजस्थान मे जैसलमेर का मेला जम्मू काशमीर मे पुरमण्डल एवं खीर भवानी मेला, विशेष प्रसिद्ध मेले है, हमारे उत्तराखण्ड की राजधानी देहरादून मे होला मेला जो श्री गुरू राम राय जी की स्मृति मे मनाया जाता है। यह मेला होली के ठीक पाचवें दिन झण्डारोहण के साथ मनाया जाता है जो कि उत्तर भारत में विशेष प्रसिद्ध मेला है।

मेलों से हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमारी प्राचीन सभ्यता हमारी एकता व अखण्डता से परिपूर्ण मेलों के कारण ही थी। जिसे हमे भविष्य मे बनाये रखना है तभी हम एक अखण्ड राष्ट्र के सुयोग्य नागरिक के रूप में जाने जायेंगे।

रिश्ते (गीत)

कल्पना चन्देल
वा.हि.भू.सं., देहरादून

रिश्तों को, बांधना पड़ता है
नाजुक सी इक डोर से
टूट न जाए, छूट न जाए
एक पवन की होड़ से

कल तक जो करते थे बातें
दुख में साथ निभाने की
आज वो अपने सुख की खातिर
हो गए एक बेगाने से

रिश्तों को, बांधना पड़ता है
नाजुक सी इक डोर से
टूट न जाए, छूट न जाए
एक पवन की होड़ से

कब तक है यह सांस
तब तक है यह आस
है बस मेरी यही तमन्ना
तब तुम रहना मेरे पास

रिश्तो को, बांधना पड़ता है
नाजुक सी इक डोर से
टूट न जाए, छूट न जाए
एक पवन की होड़ से

अब तो वो न रही शरम
टूट गए है सारे भरम
जीते जी के रिश्ते–नाते,
समझ गया ये मेरा मन,
झूठी आशा, झूठे सपनें,
लेकर चला था मेरा मन

रिश्तों को बांधना पड़ता है
नाजुक सी इक डोर से
टूट न जाए, छूट न जाए
एक पवन की होड़ से

नहीं होते

संजीव डबराल
वा.हि.भू.सं., देहरादून

गूंजती हो अगर कदमों की आहट, तो खण्डहर भी कभी वीरान नहीं होते।
पेड़ छू लेते आसमां, टूट जाते सितारे।
अगर कुदरत में ये तुफान नहीं होते।
फडफडाये लाख, कोरा कागज हथेली पर।
बिन शब्दों के वो पैगाम नहीं होते।
पूरी हो जाए अगर हर तमन्ना,
तो दिलो में ये अरमान नहीं होते।
गूंजती हो अगर कदमों की आहट तो खण्डहर भी कभी वीरान नहीं होते।
छलक न जाए अगर गम का ये प्याला,
तो सब्र के ये इम्तिहान नहीं होते।
राह अगर नई चुनी है तुमने,
तो उस पर कदमों के ये निशान नहीं होते।
बढ़ा लो अगर दो कदम तूम अपने,
तो फासले हमारे दरम्यान नहीं होते।
गूंजती हो अगर कदमों की आहट, तो खण्डहर भी कभी वीरान नहीं होते।
होंठ अगर थरथराये कहने को कुछ,
तो शब्दों में वो कभी बयान नहीं होते।
चांद अगर एक बार झुक जाए जमीन पर,
तो उस पर ये काले निशान नहीं होते।
गुनाह सौ अगर पर्दे में हो,
तो गुनाहो से वो कभी बदनाम नहीं होते।
गूंजती हो अगर कदमो की आहट, तो खण्डहर भी कभी वीरान नहीं होते।
गुल, गुलदस्ते में कितना ही महके,
गुलदस्तों से आबाद कभी गुलिस्तान नहीं होते।
इंसान अगर बन जाए इंसान,
तो इंन्सानियत पर कभी ये इल्जाम नहीं होते।
निभाया न होता अगर फर्ज हमने,
तो जिस्म पर हमारे ये निशान नहीं होते।
गूंजती हो अगर कदमों की आहट, गूंजती हो अगर कदमो की आहट।
तो खण्डहर भी कभी वीरान नहीं होते।
जिन्दा रहने का अगर वरदान होता,
न कोई मरता, न शमशान होते।
गूंजती हो अगर कदमों की आहट,
तो खण्डहर भी कभी वीरान नहीं होते।

माँ के चरणों में शीश झुकाता हूँ

लोकेश्वर वशिष्ठ
वा.हि.भू.सं., देहरादून

जब आँख खुली तो माँ की गोदी का एक सहारा था
उसका नन्हा सा आंचल मुझको भूमण्डल से प्यारा था

उसके चेहरे की झलक देख, चेहरा फूलों सा खिलता था
उसके दूध की एक बूंद से मुझको जीवन मिलता था

हाथों से बालों को नोचा पैरों से खूब प्रहार किया
माँ ने फिर भी पुचकारा जी भरके के मुझको प्यार किया

मैं उसका राजा बेटा था वो आँख का तारा कहती थी
मैं बनुँ बुढ़ापे में सहारा उसका बस यह कहती थी

उंगली को पकड़ चलाया था, पढ़ने विद्यालय भेजा था
मेरी नादानियों को भी निज अन्तर में सदा सहेजा था

मेरे प्रश्नों का वो फौरन जवाब बन जाती थी
मेरी राहों के काँटे चुन, खुद गुलाब बन जाती थी

मै बड़ा हुआ तो कालेज से एक रोग प्यार का ले आया
जिस दिल मे सूरत माँ की थी, वो रामकली को दे आया

शादी की पति से बाप बना, अपने ही रिश्तों में झूल गया
मैं भूल गया, उसकी ममता मेरे जीवन की थाती थी

मैं भूल गया, उसका जीवन वो अमृत वाली छाती थी
मैं भूल गया, वो खुद भूखी रह करके हमें खिलाती थी

हमको सूखा बिस्तर देकर, खुद गीले में सो जाती थी
मैं भूल गया उसने ही होठों को भाषा सिखलायी थी

मेरी नींदों के लिए रातभर उसने लोरी गायी थी
मैं भूल गया हर गलती पर उसने ही लोरी गायी थी

मैं भूल गया हर गलती पर उसने डांटा समझाया था
बच जाँऊ बुरी नजर से, काला टीका सदा लगाया था

बडे हुए तो, ममता वाले सारे बन्धन तोड आये
बंगले में कुत्ते पाल लिए, माँ को वृद्धाश्रम छोड़ आये

उसके सपनों का महत्व गिराकर, ककंर पत्थर बीन लिए
खुदगर्जी में, उसके सुहाग के आभूषण तक छीन लि

हम माँ को घर के बंटवारे की अभिलाषा तक ले आये
उसको पावन मदिंर से, गाली की भाषा तक ले आये

माँ की ममता को देख मौत भी आगे से डर जाती है
गर माँ अपमानित होती है, धरती की छाती फट जाती है

घर को पूरा जीवन देकर, माँ बेचारी क्या पाती है
रूखा सूखा खा लेती है, पानी पीकर सो जाती है

जो माँ जैसी देवी घर के मंदिर में नहीं रख पाते हैं
वो लाखों पुण्य भले कर लें इसांन नहीं बन पाते हैं

माँ जिसको भी जल दे, वो पौधा संदल बन जाता है
माँ के चरणों को छूकर पानी गंगाजल बन जाता है

माँ के आँचल ने युगों युगों से भगवानों को पाला है।
माँ के चरणों मे जन्नत है, गिरजाघर और शिवाला है

हर घर में माँ की पूजा हो, ऐसा संकल्प उठाता हूँ
दुनिया की हर ' माँ ' माँ के चरणो में शीश झुकाता हुं।

काश मैं उड़ पाता

रघुवीर सिंह नेगी
वा.हि.भू.सं., देहरादून

नीले अम्बर को विस्तार से, जब भी मैं देखता हूँ।
हर पल मन में एक नई उमंग, एक आशा पैदा करता हूँ।।
काश मेरे पंख होते, और मैं भी ऊँचा उड़ पाता ।
इतनी ऊँची उड़ान भरता कि गहराइयों की सीमा भी नही देख पाता।।
काश मैं उड़ पाता, काश मैं उड़ पाता।

सपना जो आसामान छूने का है,सच में पूरा कर पाता।
आँखों में जो सपने पिरोए हैं, उन सपनों को पूरा कर पाता।।
उड़कर देख सकता उन बुलन्दियों को, उन्हें छूने का अहसास कर पाता।
मन की चंचलता कहती है कि, परिन्दे की तरह मैं भी उड़ जाता।।
काश मैं उड़ पाता, काश मैं उड़ पाता।

मेरे मन की हालत ऐसी,पिंजरे के परिंदे जैसी।
फँसा हूँ पिंजरे में फिर भी, खुले आसंमा को देखता हूँ।।
मन में है विश्वास इतना कि, हर मुश्किल आसान कर सकता हूँ।
निकलकर पिंजरे से, उड़कर मंजिल पर पहुँच पाता।।
काश मैं उड़ पाता, काश मैं उड़ पाता।

हे ईश्वर इतनी शक्ति देना मुझे, कि खुद पर करुँ विश्वास इतना।
रोक न पाये कोई बाधा मुझे, चाहे उड़ता जाऊँ मैं जितना।।
बस एक उड़ान भरने की जरुरत, करनी है बहुत सारी मेहनत।
नीले गगन में उड़कर, मैं चाँद तारे तोड़ लाता।।
काश मैं उड़ पाता, काश मैं उड़ पाता।

उन सीमाओं को छू सकता, जिनके सपने देखा करता।
कुछ अच्छा काम करके जग में, अपना नाम कर सकता।।
लेकिन ये रिश्ते नातों के बंधन, उस मार्ग की हैं बड़ी उलझन।
हर बन्धन का खण्डन कर मैं, उस मंजिल को पा जाता।।
काश मैं उड़ पाता, काश मैं उड़ पाता।

आनन्द – संदेश

सविता वशिष्ठ
साँई लोक, देहरादून

असंयमित व असंतुलित जीवन शैली, संकीर्ण स्वार्थ परख मानसिकता और दम्भ भरे व्यवहार ने आज के मनुष्य जीवन को तनाव ग्रस्त, दुःखमय और दयनीय बना दिया है। आज, दस मे से आठ व्यक्ति अवसाद ग्रस्त हैं।

आज के मनुष्य का अच्छा खासा कीमती समय परदोश चिंतन व दूसरों की चर्चा में ही निकल जाता है। हम समाज सुधार की बात करते हैं, और उस चर्चा में इतने व्यस्त हो जाते हैं कि हमारा आत्म सुधार की तरफ ध्यान ही नहीं जाता है। नकारात्मक विचारों ने हमें कितना कमजोर और उद्देश्य हीन बना दिया, हम जान ही नहीं पाते है। प्रेम की जगह मन मुटाव एवं आपसी होड़ ने ले ली है। पति पत्नी एक दूसरे से नाखुश, बच्चे माता–पिता से नाखुश और माता–पिता बच्चों से नाखुश।

हमारे मन को सोचने की एक आदत है। चाहे कोई प्रयोजन हो, अथवा ना हो, वह सोचता ही रहता है। शरीर से काम हो न हो, पर व्यर्थ की सोच से हमारी सारी शक्ति खर्च हो जाती है।

गहराई से विचार करें कि हमारा मन सोचता क्या है? हमारी मन दृष्टि सदा दूसरों पर लगी रहती है, वह प्रायः दूसरों के अवगुण, उसकी कमियां देखता रहता है – इसको कहते हैं "परदोश दर्शन"।

हमारा मन राग–द्वेष से भरा पड़ा है, यह हमेशा भूत और भविश्य का ही चिन्तन करता रहता है, हमारी सबसे बड़ी कडी है, हम स्वयं को समझना ही नहीं चाहते हैं। अगर हम सभी समभाव रखेंगे, प्रेम का भाव रखेंगे तो जीवन सरल और आनन्द से भरपूर हो जायेगा।

हम किसी को नहीं बदल सकते, परन्तु ध्यान रखिये – इस संसार में केवल एक ही व्यक्ति है, जिसे हम सुधार सकते हैं, बदल सकते हैं, वह हैं – हम स्वयं,

"अपने आप को बदलो संसार अपने आप ही बदल जायेगा"

यदि दोष किसी के अन्दर है तो वह हमारे ही अन्दर है। हमारे घर में साँप आ जाये, हम तुरन्त उसे भगाने का प्रयास करते हैं, उसी प्रकार नकारात्मक विचार हमारे स्वभाव में दोष उत्पन्न करते हैं। हमें उसे भी तुरन्त सजग होकर भगाने का प्रयत्न करना होगा।

जो जैसा है वैसा ही स्वीकार्य भाव मन में रहे तो मन शांत रहेगा। ये सोचना कि करेला कड़वा क्यों है? या मिर्च तीखी क्यों हैं? इससे कुछ नहीं होगा सबकी अपनी प्रवृति है, यानि की अपना "स्वभाविक प्रवृत्ति" हम परिवर्तित नहीं कर सकते है। इसलिए जो जैसा है उसे वैसा ही स्वीकार करें। कोई व्यक्ति ऊँचे पद पर है और कोई निचले पद पर पदस्थ है। सभी अपना अपना काम करते हैं, छोटे पद को तुच्छ समझ कर अपमानित करना या ऊँची पदवी वाले से ईर्ष्या करना, ये भाव ही मन में कलुशता पैदा करते हैं।

मन के हारे हार है, मन के हारे जीत।
मन से ही पाइये, पार ब्रहम की प्रीत।।

हम सब इस संसार में भ्रमण के लिए ही तो आयें हैं। जीवन हम रूपी रेल गाड़ी के मुसाफिर हैं। फिर मन के दास होकर क्यों दुःखी होते हैं। नकारात्मक अभ्यास के कारण हमारा आत्म विश्वास कमजोर होता है। कोई भी काम शुरू करने से पहले मन बहाने बनाता है। ऐसी शंकायें खडी करता है, कि हम उत्साह हीन होकर कार्य से विमुख हो जाते हैं।

अपने प्रारब्ध और अपने ईश्वर पर भरोसा करके, हम अपने मन के बहाने को हटा सकते हैं।

हमारे स्वभाव का एक बटा दसवां हिस्सा हमें प्रकृति से मिलता है और नौ बटा दसवां हिस्सा हम खुद बनाते हैं। हमारा मन भटकता है और हमारी आदतें खराब करता है।

चिंता नकारात्मक एवं कमजोर सोच का नतीजा है, अगर हम सोच लें कि परमात्मा ने हमें समर्थ बनाया है तो शायद हमारा काम करने और जीने का नजरिया बदल जाये। हम दूसरों पर निर्भर रहते हैं। कोई हमारी मदद कर दे, मेरे ऊपर कितना भार हैं। हम स्वयं पर विश्वास न करके दूसरों की ओर दीन भाव से देखेंगे तो जीवन में आनन्द कहाँ से आयेगा। हमें दूसरों की आदत पड़ जाती है, गाँधी जी

अकेले चले और पूरा देश उनके कदम से कदम मिला कर चल पड़ा। उनमें एक आत्म विश्वास था, ऊँचा मनोबल था। यदि वह सोच लेते कि कौन मेरा साथ देगा, तो क्या आज हम आजाद फिजां में सांस ले रहे होते।?

अपने को लचीला रखिये, प्रेम का भाव जीवन में जरूरी हैं, भूत काल में जो घटित हो गया उससे वर्तमान नहीं बिगाड़ना चाहिए। हर दिन नई शुरूआत हो, नई उमंग हो। हम सोच कर बैठ जाते हैं, हमारी संतान बडी होकर हमें दु:ख देगी, आश्रम में छोड़ देगी, और यही धारणा हमारा सु:ख चैन छीन लेती है। उसके प्रति बनी धारणा ही हमें दु:ख देती रहती हैं, क्यों न एक धारणा बनायें कि ईश्वर ही सत्य है, भाव अच्छा रखेंगे तभी तो भविश्य अच्छा होगा।

सार यह है किं जीवन को जीने का नजरिया सही हो तो जीवन में आनन्द ही आनन्द है। अतः निम्न सूत्र जीवन मे बनायें रखे।

1. स्वयं पर विश्वास रखे, सोच सकारात्मक बनायें।
2. प्रेम वह बीन है, जिसकी मधुर ध्वनि से सर्परूपी मन मदहोश हो सहज ही वश में हो जाता है।
3. हमारा स्वयं से सम्बन्ध ही हमारे सभी सम्बन्धों की कुँजी है।
4. क्षमा हम दूसरों को करते हैं, परन्तु मुक्त स्वंय को।
5. हमारा पूरा जीवन हमारी सोच का परिणाम है, जैसा हम सोचते हैं वैसा ही हमारा जीवन बनता है।
6. हर बात का सामना शान्त चित्त से करें, हमेशा मुस्कुराते रहें।
7. अपने कास्मिक बैंक को रोज भरिये। शुक्रिया कहने की आदत डालिये।
8. पैदल व परहेज स्वास्थ्य के गुर हैं।
9. जब भोजन करने बैठे, प्रभु का शुक्रिया करें कि हम भाग्य वान हैं, कि आपने हमें भूखा नहीं सुलाया।
10. हमेशा याद रखें कि आँख खुलते ही सपना चला जाता है और आखँ बंद होते ही अपना बंद होते ही अपना चला जाता है इसलिए सच्ची प्रीत उस साच्चिदानन्द से ही करे और प्रसन्न रहें यही सच्चा जीवन है।
11. सब पर परमेश्वर की कृपा बरसे, सभी सुखी हों, सभी निरोगी हों किसी के जीवन में दु:ख न आयें,

    यही आनन्द संदेश हैं।

धन्यवाद!

क्या जानवर भूकम्प के खतरे को महसूस कर लेते हैं?

सुशील कुमार
वा.हि.भू.सं., देहरादून

सदियों से यह चर्चा का विषय है कि जानवर भूकम्प की भविष्यवाणी करने में सहायक हो सकते हैं। 373 ईसा पूर्व इतिहासकारों ने दर्ज किया कि भूकम्प के एक दिन पहले ही कुछ जानवरों जैसे चूहे सांप और नेवले ने ग्रीक के शहर हेलिस को छोड़ दिया था। उस भूकम्प में हेलिस शहर पूरी तरह से तबाह हो गया था। भूकम्प के आने से पहले जानवरों का अजीब व्यवहार सदियों से दर्ज किया गया है। जैसे मुर्गियों ने अण्डे देना बन्द कर दिया। मधुमक्खियों ने घबराहट में अपना छत्ते को छोड़ दिया। अनगिनत लोगों ने दावा किया कि उनकी बिल्लियां और कुत्ते कम्पन आने से पहले अजीब–अजीब हरकते करने लग गये थे। जैसे बिना कारण भौंकने लगे थे या घबराहट और बैचेनी के लक्षण दिखाने लगे थे।

लेकिन प्रश्न् यह है कि जानवरों को क्या लगता है? अगर वे कुछ भी महसूस करते है तो यह एक रहस्य है? एक सिद्धान्त के अनुसार जानवर भूकम्पों के कम्पन को मनुष्यों से काफी पहले महसूस कर लेते हैं। एक दूसरा मत यह भी है कि धरती से निकलने वाली गैसों या हवा में विधुत परिर्वतनों को जानवर महसूस कर लेते हैं।

भूकम्प एक अचानक होने वाली घटना है। भूकम्प विशेषज्ञों के पास भी अभी ऐसा कोई तरीका नहीं है जिससे वे बता सके कि अगला भूकम्प कब और कहाँ आयेगा?

दुनिया में 500,000 से ज्यादा भूकम्पों को हम रिकार्ड कर लेते है। इनमें से 100,000 भूकम्प मनुष्यों द्वारा महसूस होते है तथा 100 भूकम्प ऐसे होते हैं जो जान माल का नुकसान करते हैं दुनिया में सबसे ज्यादा भूकम्प आने वाले देशों में एक जापान है जहाँ भूकम्पों ने बहुत तबाही की है और अनगिनत लोगों का जीवन लिया है तथा सम्पत्ति को भारी नुकसान पहुचांया है। वहाँ शोधकर्ता लम्बे समय से जानवरों के व्यवहार पर अध्धयन करे रहे है। इस आशा में कि वह जान सकें कि भूकम्पो से पहले जानवर क्या सुनते है और क्या महसूस करते है। ताकि वे इस शोध को भूकम्पो की भविष्यवाणी करने में उपयोग कर सके। 1970 के दशक में यू.एस.जी.एस. ने जानवरों के व्यवहार पर काफी अध्धयन किया लेकिन कुछ भी ठोस परिणाम नहीं निकला। यु.एस. जी.एस. के एक भूभौतिकी माइकल एंडी का कहना था कि जानवर इतनी सारी चीजों पर प्रतिक्रिया करते है कि उसे भूकम्प की सटीक भविष्यवाणी के लिये उपयोग करना संभव नहीं है। दुनिया भर के शोधकर्ताओं ने यद्यपि इस विचार का पीछा जारी रखा।

2003 में जापान में एक मेडिकल डाक्टर ने कुत्तों में अनियमित असामान्य व्यवहार का संकेत दिया। भारत में हिमालय में आये 1991 में उत्तरकाशी में 6.8 परिमाण के भूकम्प एवं 1999 में चमोली में 6.6 परिमाण के भूकम्प में भी स्थानीय लोगों ने इस तरह की घटनाओं का जिक्र किया था। चमोली में पहाड़ पर एक घर से लगभग 500मी दूर एक बाड़े में गाय बंधी थी। भूकम्प से लगभग एक घंटा पहले वह जोर–जोर से रम्भाने लगी। बाड़े की मालकिन ने पहले इसे सामान्य रम्भाना समझकर कोई ध्यान नहीं किया। परन्तु

लगातार कुछ असामान्य रम्भाने से उसका ध्यान गाय की तरफ गया वह बाड़े की तरफ दौड़ी उसने देखा कि गाय रम्भाने के साथ अपना रस्सा खूटे से छुड़ना चाहती है। उसने रस्सा खोल दिया और गाय बाहर की तरफ भागी। और कुछ देर में भूकम्प के तेज झटके शूरू हो गये। घर से बाहरे होने के कारण वह भी अपनी जान बचा पायी। ऐसा ही एक वाकया 2001 में भुज में आये 7.7 परिमाण के भूकम्प के बाद गांधीनगर गुजरात के एक स्थानीय आदमी ने बताया उसके दो पालतु कुत्ते घर के अन्दर खुले ही रहते है। भूकम्प आने के लगभग 30 मिनट पहले वह तेजी से भौंकते हुये इधर–उधर भाग रहे थे। घर में कुत्ते अक्सर शान्त ही रहते थे परन्तु उनका यह व्यवहार बिल्कुल असामान्य था घर में, उन कुत्तो के व्यवहार से मालिक बिल्कुल वाकिफ था पहले तो उसकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि वे ऐसे क्यों कर रहे है परन्तु उसने देखा कुत्ते बार–बार मुख्य दरवाजे की तरफ भाग रहे हैं जैसे ही उसने मुख्य दरवाजा खोला कुत्ते तेजी से घर से बाहर भाग गये। और कुछ देर बाद ही तीव्र भूकम्प के झटके महसूस होने लगे। ऐसा असामान्य व्यवहार घोडों एवं पालतु बिल्लियों में भी भूकम्प से पहले देखा गया है ऐसे उदाहरण भी है जहाँ अधिकारियों ने जानवरों के अजीब हरकतों पर सफलतापूर्वक एक बड़े भूकम्प का पूर्वानुमान किया है।

उदाहरण के लिये, 1975 में चीनी अधिकारियों ने एक लाख लोगों को हाइक्चेंग शहर को खाली करने का आदेश दे दिया था, जोकि 7.3 परिमाण के भूकम्प से एक दिन पहले था। इसमें केवल कुछ लोग घायल हुये थे। यदि शहर खाली नहीं कराया होता तो अनुमान लगाया गया कि मृत्यु एवं घायलो की संख्या 1,50,000 से अधिक होती। माइकल एंडी का कहना है कि हाइक्चेंग भूकम्प की घटना के बाद लोगों में उम्मीद जगी कि भूकम्पों का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है पर यह पूरी तरह केवल जानवरों के व्यवहार से सम्भव नहीं हो पाया था बल्कि वहां हाईचेंग भूकम्प से पहले छोटे–छोटे झटकों की एक श्रृखंला, जिसे फारसॉक्स कहा जाता है, से सम्भव हो गया था फिर भी चीनी वैज्ञानिकों ने भूकम्प की भविष्यवाणी के लिये सहायता के रूप में जानवरो के व्यवहार के अध्ययन को जारी रखा है जिससे उन्हें कुछ सफलता भी मिली और कुछ झूठे अलार्म भी साबित हुये हालाँकि जानवरों का भूकम्प से पहले असामान्य व्यवहार अपने आप में भूकम्प की भविष्यवाणी करने में तो सक्षम नहीं है परन्तु भूकम्प से पहले क्रस्ट में भौतिक बदलाव पर आधारित प्रिकर्सरो के साथ मिलकर जानवरों के असामान्य व्यवहार का अध्ययन भूकम्प की भविष्यवाणी में सहायक हो सकता है। जानवरों के अनियमित असामान्य व्यवहार की सभी घटनाओं को संकलित करके एवं खास ऐसे जानवरों के व्यवहार पर लगातार अधयन करके जानवरों के व्यवहार एवं भूकम्प के बीच एक प्रयोगात्मक सम्बन्ध बनाया जा सकता है जो पूरी दुनिया को भूकम्प के खतरे को आगाह करने में सक्षम हो सकता है।

मंगसीर की दीवाली

एन.के. जुयाल
वा.हि.भू.सं., देहरादून

गढ़वाल के मंगसीर की दीवाली का विशेष ही महत्व है। मंगसीर की दीवाली उत्तरकाशी, जौनसार, जौनपुर टिहरी क्षेत्रों में दीपावली के समय कुछ स्थानों में दीपावली नहीं मनाते हैं। आस पास के गांवों में दीयों की जगमगाहट पटाखे, फुलझडी भैलों का खेल होता है। परन्तु कुछ गांवों में अंधेरा छाया रहता है। एक दुख सा अशान्त मन बना रहता है। उनके घर परिवार रिश्तेदार दीवाली तक आने को कह गये थे। परन्तु जब नही आये तो मन दुखी हो गया। फिर जब 15 गते मंगसीर को वे वीर यौद्धा घरों को लौट कर आये तो फिर ये दीवाली मनाई गयी। पूड़ी पकोड़ी बनायी गयी। भैलो खेलकर सारा दुःख भुला दिया गया। मात्र शेष रह गया उस घटना से सम्बन्धित गीत।

वारा ऐन बग्वालि, मेरो माधो नि आई
दाल छड़ी रै गये, मेरो माधो नि आई
सभी घर बोडि एगै, मेरो माधो नि आई
तेरी सणी तोरा गिचपराणी
कख दोलू म्येरो माथी, मेरो माधो नि आई

यह गीत आज भी थड़या, तॉदी आदि में गाया जाता है। वीर माधोसिंह भण्डारी सोलहवीं ईसवी में गढ़वाल श्रीनगर राज्य के प्रसिद्व भड़ एवं सेनापति थे। इनका कार्य क्षेत्र उत्तरकाशी, जौनपुर टिहरी के युवाओं की सेना को संचालित करना था। इसी क्षेत्र के वीर इनकी सेवा में थे। तिब्बत के लुटेरे गढ़वाल में आ कर लूटपाट करते थे। इसके कारण बार–बार सीमा की सुरक्षा पर सेना भेजी जाती थी। तिब्बतियों के इन्हीं आक्रमणों को देखने के लिए गढ़वाल नरेश ने सेनापति माधोसिंह भण्डारी को अपनी सेना लेकर तिब्बतियों को मार भगाने के लिए तथा सीमा पर तिब्बतियों के उपद्रब को दबाने भेजा। उस समय युद्ध काल में वीर युवाओं को आमंत्रित किया जाता था। जो युद्ध के बाद अपनी खेती–बाड़ी करते थे। राजा के पास अलग–अलग क्षेत्र के प्रभुत्व रखने वाले सेनापति–तथा दरबार के पद धारक होते थे। उन्हीं के उपर सेना को इकट्ठा करने का क्षेत्रीय भार होता था। भण्डारी संघ का माणिकनाथ का क्षेत्र भी है। जौनसार टिहरी क्षेत्र में भण्डारी संघ का दबदबा था। इसी कारण माधोसिंह भण्डारी इन्हीं क्षेत्रों के वीर युवाओं को तिब्बत विजय अभियान में ले गये थे। जाते समय सभी वीरों नें अपने मां, बाप, भाई बहन से दीवाली से पहले घर लौटकर आने को कहा था। परन्तु दीवाली आई और अपनी रोशनी बिखेर कर गुल हो गई। वीर योद्धा नही लौटे। तिब्बत विजय पर गये बेटों की चिन्ता सताने लगी। मन रूआंसा सा छटपटाने लगा। मन का अंधेरा पहाड़ी घाटियों में रोता रहा।

उधर तिब्बत विजय के बाद माधोसिंह सीमा रेखा पर पत्थरों को रखने में व्यस्त हो गये, उन पत्थरों पर राम लिखा था। इसी बीच बारिश, बर्फ–घना कोहरा छा गया। रास्ते बर्फ से ठक गये थे। घाटियों में बुरी तरह फंसे माधोसिंह ने जिधर भी सुलभ समझा उधर ही बढ़ने लगे। बर्फ को पार करते–करते वे अल्मोड़ा के उच्छनंदन गढ़ पहुंच गये। अल्मोड़ा के क्षेत्र में कोई न पहचान पाये इसलिए उन्होंने साधारण यात्री, नाच गाने वालों का भेष बना लिया। कई दिन से भूखे भी थे, गढ़ में उत्सव चल रहा था। माधोसिंह ने अपने साथियों को अलग–अलग टुकड़ियों में बॉट कर भोजन की टोह में छोड़ दिया। स्वयं कुछ वीरों के साथ उच्छनंदन गढ़ में चले गये। वहॉ उत्सव में अपने साथियों के साथ जौनसारी नृत्य करने लगे। जौनसारी गीत नृत्य की अनोखी अदा देखने सभी एकत्रित हो गये। उन्हीं में उच्छनंदन गढ़ की राजकुमारी उदिना भी खड़ी होकर नृत्य देखने लगी। माधोसिंह उसे देखते ही नृत्य करना भूल सा गये। अपने साथियों को गीत के माध्यम से संकेत देकर उदिना को बलपूर्वक उठा कर भाग गये। थोड़ा बहुत गढ़वीरों ने संघर्ष भी किया। अतंतः वीर माधोसिंह भण्डारी उदिना को लेकर श्रीनगर गढ़वाल पहॅच गये।

मार्गशीर्ष में श्रीनगर गढ़वाल में तिब्बत विजयी वीर माधोसिंह भण्डारी की वीर सेना का भव्य स्वागत हुआ। उनके आने की सूचना जौनसार, उत्तरकाशी में पहॅुची। गॉव–गॉव, घर–घर में खुशी की लहर दौड़ पड़ी। उनके बेटे घर लौट आये, घाटियां तांदी गीतों से गूंजने लगी। 15 गते मंगसीर को माधोसिंह की वीर सेना तिब्बत विजय कर घर लौट आने पर पुनः दीवाली मनाई गई। घाटियों में पूड़ी, पकौड़ी, भूड़े, स्वालों की सुगंध दौड़ पड़ी। बग्वाल फिर लौट आई। घाटियों में दीयों की रोशनी, खेतों में भैलों की रंगत दौड़ पड़ी। आज भी मंगसीर की यह दीवाली–माधोसिंह की दीवाली के नाम से प्रसिद्व है तथा मनाई जाती है।

संस्थान समााचार

स्वतंत्रता दिवस समारोह – 2016

स्वतंत्रता दिवस समारोह हर वर्ष की भाँति धुम–धाम से मनाया गया। इस अवसर पर कला प्रतियोगिता व विभिन्न खेल प्रतियोगिताऐं आयोजित की गयी जिसमे संस्थान के कर्मचारी एवम् उनके परिवारजनों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया। समारोह का समापन निदेशक महोदय द्वारा विजेताओं को पुरूस्कार वितरित कर किया गया।

हिन्दी पखवाड़ा – 2016

ऑफिस के दैनदिन कार्यो में हिन्दी भाषा के प्रयोग को प्रोत्साहन के उद्देश्य के साथ संस्थान में हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन दि. 14 सितम्बर से 28 सितम्बर 2016 तक किया गया। हिन्दी पखवाड़े का शुभारम्भ माननीय न्यायमूर्ति श्री एस.एस. श्रीवास्तव, लोकायुक्त छत्तीसगढ़ द्वारा किया गया। हिन्दी पखवाड़े में आमंत्रित व्याख्यान, स्वरचित कविता पाठ, निबन्ध प्रतियोगिता एवम् वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

प्रथम आमंत्रित व्याख्यान डा. एल.एम.एस. पालनी, पूर्व निदेशक, जी.बी. पन्त हिमालय पर्यावरण एवम् विकास संस्थान द्वारा जैव प्रोद्यौगिकी पर दिया। अपने व्याख्यान में उन्होंने जैव प्रोद्यौगिकी किस तरह यह मनुष्य की प्रगति मे सहायक है, पर जोर दिया।

द्वितीय आमंत्रित व्याख्यान डा. निलय खरे, निदेशक पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय द्वारा दि. 19–09–2016 को दिया गया। उनके व्याख्यान का मुख्य विषय समुद्र विज्ञान एवं जलवायु परिवर्तन था। किस तरह विज्ञानियों ने समुद्र से मानवीय प्रगति के लिए संसाधन जुटाये है और भारत मे समुद्र विज्ञान की स्थिति का विश्लेषण उन्होंने अपने व्याख्यान मे किया।

संस्थान के वैज्ञानिकों ने भी तकनीकी विषयों पर हिन्दी में व्याख्यान दिया। संस्थान के कर्मचारियों के लिये निबन्ध प्रतियोगिता में भी संस्थान कर्मचारियों की उत्साहजनक भागीदारी रही।

दूसरी तरफ स्कूली विद्यार्थियों के लिये निबन्ध प्रतियोगिता व वाद–विवाद प्रतियोगिता में देहरादून शहर से विभिन्न स्कूलों ने भाग लिया। छात्रों ने विषय के पक्ष व विपक्ष में तथ्यपरक् विचार प्रस्तुत किये। हिन्दी पखवाड़े का समापन समारोह मुख्य अतिथि प्रो. सुरेन्द्र कुमार, कुलपति गुरूकुल कॉंगडी विश्वविद्यालय, हरिद्वार के कर कमलों से हुआ।

15 August 2016

Republic Day 2017

Swachh Bharat 2016

Yoga Day, 2016

“अपनी भाषा, अपना देश
देता गौरव का संदेश ”
हिंदी पखवाड़ा कार्यक्रम
(14 - 28 सितंबर 2016)
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान में
आपका स्वागत है

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRA DUN
PUBLICATIONS AVAILABLE FOR SALE

HIMALAYAN GEOLOGY

(These volumes are the Proceedings of the Annual Seminars on Himalayan Geology organizsed by the Institute)

		(in Rs)	(in US $)
Volume 1	(1971)	130.00	26.00
Volume 2*	(1972)	50.00	
Volume 3*	(1973)	70.00	
Volume 4*	(1974)	115.00	50.00
Volume 5	(1975)	90.00	50.00
Volume 6	(1976)	110.00	50.00
Volume 7	(1977)	110.00	50.00
Volume 8(1)	(1978)	180.00	50.00
Volume 8(2)	(1978)	150.00	45.00
Volume 9(1)	(1979)	125.00	35.00
Volume 9(2)	(1979)	140.00	45.00
Volume 10	(1980)	160.00	35.00
Volume 11	(1981)	300.00	60.00
Volume 12	(1982)	235.00	47.00
Volume 13*	(1989)	1000.00	100.00
Volume 14* (in Hindi)	(1993)	600.00	-
Volume 15*	(1994)	750.00	

(Available from M/s Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, Bombay, Kolkata)

Volume 16*	(1999)	1000.00	100.00

Journal of Himalayan Geology

(A bi-annual Journal : published from 1990 to 1995)

Annual Subscription	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 1 (1990) to Volume 6 (1995)*

HIMALAYAN GEOLOGY

(A bi-annual Journal incorporating Journal of Himalayan Geology)

Annual Subscription:	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 17 (1996)*

HIMALAYAN GEOLOGY

Revised Annual Subscription (w.e.f. 1997):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	750.00	50.00
Individual (incl. postage)	100.00	25.00

Volume 18 (1997) to Volume 26 (2005)*

Volume 27 (2006) to Volume 30 (2009)

Volume 31 (2010) to Volume 32 (2011)*

Volume 33 (2012)

Volume 34 (2013) to Volume 36 (2016)*

Volume 37 (2015) to Volume 38 (2017)

Revised Annual Subscription (w.e.f. 2018):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	2000.00	150.00
Individual (incl. postage)	600.00	50.00
Individual (excl. postage)	500.00	

Volume 39 (2018)

OTHER PUBLICATIONS

Geology of Kumaun Lesser Himalaya, 1980 (by K.S. Valdiya)	Rs. 180.00 US $ 50.00
Geology of Indus Suture Zone of Ladakh, 1983 (by V.C.Thakur & K.K. Sharma)	Rs. 205.00 US $ 40.00
Bibliography on Himalayan Geology, 1975-85	Rs. 100.00 US $ 30.00
Geological Map of Western Himalaya, 1992 (by V.C. Thakur & B.S. Rawat)	Rs. 200.00 US $ 15.00
Excursion Guide :The Siwalik Foreland Basin (Dehra Dun-Nahan Sector), (WIHG Spl. Publ. 1,1991) (by Rohtash Kumar and Others)	Rs. 45.00 US $ 8.00
Excursion Guide : The Himalayan Foreland Basin (Jammu -Kalakot-Udhampur Sector) (WIHG Spl Publ.2,1999) (by A.C. Nanda & Kishor Kumar)	Rs. 180.00 US $ 15.00
Glacier Lake Inventory of Uttarakhand (by Rakesh Bhambri et al. 2015	Rs. 500.00 US $ 50.00
Siwalik Mammalian Faunas of the Himalayan Foothills With reference to biochronology, linkages and migration (by Avinash C. Nanda)	Rs. 1200.00 US $ 100.00
Atlas of early Palaeogene invertebrate fossils of the Himalayan foothills belt (WIHG) Monograph Series No. 1, 2000) by N.S. Mathur & K.P. Juyal (Available from M/s Bishen Singh Mahendra Pal Singh, 23-A New Connaught Place, Dehradun- 248001, Email: bsmps@vsnl.com	Rs. 1450.00 US $ 50.00

Note: 'Journal of Himalayan Geology' & 'Himalayan Geology' have been merged and are being published as Himalayan Geology' after 1996.
*** Out of Stock**

Life Time Subscription of Himalayan Geology
(Individuals only) India: 3000/- abroad: US$ 300

Trade Discount (In India only)
1-10 copies: 10%, 11-15 copies: 15% and 15 copies: 20%

Offer (for a limited period): A free set of old print volumes (1971 to 2012, subject to availability) of 'Himalayan Geology' will be provided to the new registered Life Time Subscribers (Postage to be borne by the subscriber).

Publications: *may be purchased from Publication & Documentation Section and Draft/Cheque may be drawn in the name of The Director, Wadia Institute of Himalayan Geology, 33- General Mahadeo Singh Road, Dehra Dun – 248 001*

Phone: 0135-2525430 Fax: (91) 0135-625212 Website: http://www.himgeology.com E-mail: himgeol@wihg.res.in